भक्तामर-महाकाव्य

सरल भाषा टीका, नूतन पद्यानुवाद

ऋद्धि-मंत्र-विधि-फल

तथा

श्रीमन्महामुनिसोमसेनकृत

भक्तामर-संस्कृत-पूजा सहित

लेखकः—

पं० कमलकुमार जैन शास्त्री 'कुमुद'

खुरई (जिला सागर) म० प्र०

प्रकाशकः—

श्री कुन्थुसागर स्वाध्याय सदन, खुरई

श्री आदिनाथ निर्वाण संवत्

४१३४५२६३०३६८२०३१७७८४९५१२१९१९९९९९९९९९९९

९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९३०४९७

पर्यूषणपर्व

प्रथम वार } वीर निर्वाण सं० २४७७ { लागत मूल्य

२००० } सर्वाधिकार-सुरक्षित { १२ आना

जगद्वन्द्य जिनेन्द्रदेव की

पूजा तथा स्तुतियों के पाठ किये, विना जिन्होंने

कभी अन्न ग्रहण नहीं किया उन्हीं

पूज्य–पिता

स्व० श्री मोहनलाल जी जैन भायजी

की पवित्र स्मृति में

जिन्होंने मुझे इस योग्य बनाने के लिये सब कुछ किया

परन्तु

जिनके लिये मैं कुछ भी न कर पाया ।

आमुख

आदिनाथ स्तोत्र का—जिसे भक्तामर शब्द से प्रारम्भ होने के कारण 'भक्तामर स्तोत्र' भी कहते हैं—जैन-परम्परा में व्यापक प्रचार और महान् महत्व है। इसकी रचना में भक्ति का तादात्म्य तो है ही, काव्य-दृष्टि से और उपमा तथा अलङ्कार योजना से भी इसका स्थान अप्रतिम है। इसे दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं ने समान रूप से स्वीकार किया है।

भक्ति और स्तवन से अन्तराय की रस हानि होकर ऐसी भूमिका तैयार होती है, जिससे भक्तजन अपने को हर तरह हलका-सरल-विनीत और सर्वतःसम्पूर्ण अनुभव करता है। उसकी ऐहिक और पारलौकिक आकांक्षाओं की पूर्ति का क्षण भी अनायास उपस्थित हो जाता है। चित्त की प्रसन्नता और विशुद्धि ही ऐसी निधि है, जिसके धनी को और सब तुच्छ भासता है। उसे भक्ति जन्य विशुद्धि पर अटूट-अगाध विश्वास होता है और यही वह सम्बल है, जिसके बल पर वह बीहड़ पथ को हँसते हँसते पार कर जाता है।

प्रस्तुत-पुस्तक के संकलयिता और लेखक ने इसका भाषानुवाद तथा अर्थ और अभी तक साहित्य क्षेत्र में न आई हुई अमुद्रित श्रीमन्महामुनि सोमसेनकृत "भक्तामर महाकाव्य मंडल पूजा" आदि विविध सामग्री से इसे समृद्ध किया है। इस प्रयत्न से साहित्य-श्री में अभिवृद्धि होगी यह असंन्दिग्ध है। आशा है जिनेन्द्र भक्त जैन-जनता इसे अपनाकर लेखक के श्रम को सफल बनायेगी।

पं० फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री, पं० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्य
व्य० वर्णी जैन ग्रन्थमाला प्रो० हिन्दू विश्व विद्यालय
बनारस

आवेदन

अखिल जैन-समाज में भक्ति-मार्ग को प्रदर्शित करने वाले प्रायः सभी संस्कृत स्तोत्रों में 'आदिनाथ स्तोत्र' ने अधिक आदर श्रद्धा तथा ख्याति प्राप्त की है। यह स्तोत्र विविध अलङ्कारों से भूषित-सारगर्भित सूक्तियों से सुसज्जित एवं सुमधुर पदों से विभूषित है। इस स्तोत्र के शब्द २ से भक्ति रस की अविरल धारा प्रवाहित होती है। समूचे स्तोत्र में एक से एक बढ़कर काव्य रचनाएँ हैं, जो कि पढ़ने वाले का मन वरवश मोह लेती हैं। वाचक वृन्द भक्ति रस में तन्मय होकर धर्म का एक अपूर्व लाभ अनायास ही प्राप्त कर लेता है। वास्तव में यह एक ऐसा अनुपम स्तोत्र है जो वीतराग शुद्धात्म स्वरूप की प्राप्ति की ओर अग्रसर करने में समर्थ है। समाज में यह सौम्य-सुन्दर आदिनाथ स्तोत्र 'भक्तामर' जी के नाम से अधिक प्रसिद्ध है, इसका कारण है इसका 'भक्तामर' शब्द से प्रारम्भ होना।

इस स्तोत्र की लोक-प्रियता का वर्णन करना संभव नहीं है, क्योंकि समाज के प्रायः सभी स्त्री पुरुष तथा बच्चे तक इसको कंठाग्र रखते हैं और अधिकांश तो इसका पाठ किये विना या विना श्रवण किये भोजन तक नहीं करते। परन्तु अधिकतर स्त्री-पुरुषों को उसका शुद्ध उच्चारण तथा अर्थ समझने का सौभाग्य नहीं मिलता, इससे वे सिर्फ श्रद्धाजन्य पुण्य को ही पा सकते हैं, विवेक जन्य पुण्य को नहीं। अस्तु सर्व साधारण के हितार्थ प्रस्तुत पुस्तक में आज कल की खड़ी बोली की कविता में बोध गम्य सरल पद्यानुवाद तथा लोकप्रिय हिन्दी भाषा में अर्थ दे दिया गया है जिससे इसकी उपयोगिता अधिक

बढ़ गई है। प्रत्येक मूल श्लोक के ऊपर शीर्षक में श्लोक का विषय सूचित कर दिया जाने से भी एक बड़ी कठिनाई का हल हो जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक में पहले श्लोक, उसके नीचे पद्य में हिन्दी अनुवाद फिर भाषा में सरल अर्थ और बाद में ऋद्धि मंत्र-विधि तथा उसका फल दिया गया है। इस तरह प्रत्येक पृष्ठ में एक श्लोक आ जाता है।

श्री मानतुङ्गाचार्य ने अपने ऊपर आये हुये महान् उपसर्ग को इसी स्तोत्र का निर्माण करके दूर किया था। उसके बाद अगणित प्राणियों के संकट निवारण में यह काम आया है, तथा भविष्य में भी यह मानव-समाज को आपत्तियों से बचाने में सहायक होगा।

कहा जाता है कि आचार्य श्री राजाभोज के समकालीन थे। एक समय की घटना है कि भोज के दरबार के विद्वान् कवि कालिदास तथा वररुचि ने साम्प्रदायिकता वश आचार्यप्रवर को राजाज्ञा से पकड़वा कर ४८ कोठरियों के भीतर बंद करवा दिया। तीसरे दिन आचार्य श्री ने आदिनाथ स्तोत्र की रचना की, जिसके प्रभाव स्वरूप वे स्वतः कैदखाने से निर्मुक्त होकर उसके बाहर एक शिला खंड पर आ विराजे। कई बार उनको कैद किया गया, परन्तु स्तोत्र की अधिष्ठात्री चक्रेश्वरी देवी उनकी बराबर रक्षा करती रही। सन्तरियों ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु स्तोत्र के अपूर्व प्रभाव से वे उन्हें कैद करने में असफल हुए।

राजा भोज ने भी हार स्वीकार कर आचार्य श्री से क्षमा मांगी और उनके तेज पुण्य प्रभाव से प्रभावित होकर, कल्याणकारी जैनधर्म को अङ्गीकार कर लिया। उपस्थित जनता भी जैन धर्म की अनुयायी हो गई। कविश्रेष्ठ कालिदास तथा उनके श्वसुर वररुचि को हार

माननी पड़ी। परम संतोषी निर्मोही आचार्य श्री ने दोनों को क्षमा कर दिया।

पुस्तक के अन्त में महामुनि श्री सोमसेन कृत भक्तामर महाकाव्य मंडल पूजा जो कि अभी तक समाज का इस ओर ध्यान न जाने के कारण प्रकाश में नहीं आसकी थी—जोड़ दी गई है। इससे प्रस्तुत पुस्तक की उपयोगिता कई गुनी अधिक बढ़ गई है। पूजा के अंत में मुनि श्री ने ४८ अर्घों के ४८ श्लोक निर्माण किये हैं, उनको पढ़ने से एक दूसरा भक्तामर महाकाव्य ही पढ़ रहे हैं ऐसा मालूम पड़ने लगता है।

प्रस्तुत पुस्तक के संकलयिता तथा लेखक श्री पं० कमलकुमार जी जैन शास्त्री 'कुमुद' ने अपने मित्रों और सहयोगियों के अनुरोध वश जो अथक श्रम कर इस कृति का निर्माण किया है, वह वर्तमान जैन साहित्य में एक अनूठी आदर्श कृति होगी, ऐसी हमारी धारणा है और हमारा यह भी विश्वास है कि इसका समाज में समुचित आदर होगा।

"कुन्थुसागर स्वाध्याय सदन" खुरई के चुने हुये कुछ कर्मठ युवकों की एक छोटी किन्तु ठोस संस्था है। इसका उद्देश्य जन-साधारण में स्वाध्याय के प्रति प्रेम तथा अभिरुचि पैदा करना है। संस्था के इस उद्देश्य को ध्यान में रख कर ही यह पुस्तक जन-साधारण के हितार्थ सदन द्वारा प्रकाशित हो रही है। संस्था चाहती है कि प्रस्तुत पुस्तक से जो भी आय होगी उसको पुनः किसी दूसरी उपयोगी पुस्तक के प्रकाशन में व्यय की जावेगी। हम हृदय से इसकी सफलता चाहते हैं।

आवेदकः—

मंत्री, कुन्थुसागर स्वाध्याय सदन

खुरई (सागर) म० प्र०

आत्म-निवेदन

आदिनाथ स्तोत्र जिसका दूसरा नाम भक्तामर भी है जैन समाज में सबसे अधिक प्रचलित भक्तिरस का अपूर्व महाकाव्य है। इसका परिचय देना सूर्य को दीपक दिखाना है। अखिल जैन-समाज में विरला ही कोई ऐसा होगा जो इस स्तोत्र के नाम से परिचित न हो। इस युग में जब कि कई लोग धर्म का अस्तित्व तक स्वीकार नहीं करते और उसे एक ढकोसला बताकर उसकी खिल्लियां उड़ाया करते हैं—बहुत से, धर्म पर गाढ़ श्रद्धा रखने वाले ऐसे भी जैनी हैं जो तत्वार्थसूत्र और भक्तामर का पाठ और श्रवण किये बिना अन्न तक ग्रहण नहीं करते। हिन्दुओं में गणेशस्तोत्र का जो स्थान है, जैनियों में वही स्थान भक्तामर को प्राप्त है। बहुत सी लौकिक पुस्तकों के पढ़ चुकने के बाद भी जैन बालक जब तक उपर्युक्त दोनों महान् धार्मिक पुस्तकों को पढ़ नहीं लेता तब तक वह समाज की दृष्टि में वे पढ़ा ही समझा जाता है। वास्तव में बालक बालिकाओं की योग्यता परखने के लिए दोनों धर्म ग्रन्थों की जानकारी एक कसौटी की तरह है। इतने मात्र से समझ लेना चाहिए कि इस पवित्र पुण्यमय स्तोत्र का कितना अधिक माहात्म्य है और जैन लोग इसे कितनी आदर तथा श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। इस काव्य-ग्रन्थ ने अपने जिन अपूर्व अनुपम अद्वितीय गुणों के कारण महान् माहात्म्य, अमर्यादित प्रचार, और विशेष रूप से ख्याति प्राप्ति की है, वह किसी से भी छिपी हुई नहीं है। फिर भी हमारा सुषुप्त समाज समीचीन संस्कृत विद्या के अभाव में उसके सर्वोत्तम विविधगुणों की जानकारी से वंचित होता जाता है। वह यह नहीं समझ पाता कि ४८ श्लोक वाले इस छोटे से काव्य ग्रन्थ में ऐसा कौनसा अमृत भरा हुआ है जिसे पान करके न केवल जैन अपितु इस पर विमुग्ध हुए जैनेतर विद्वानों तक ने इसकी भूरि २ मुक्तकंठ से प्रशंसा की है और उस पर अपनी लेखनी चलाने का कष्ट उठाया है।

जैन समाज के अधिकांश संस्कृत विद्या विहीन नर-नारियों और बालकों को उसी अपूर्व अमृत का रसास्वादन कराने की कल्याण-मयी कामना से कई जैन विद्वान् लेखकों और सुकवियों ने इस काव्य-ग्रन्थ की विविध टीकाएं और अनुवाद करके साहित्य श्री में अभिवृद्धि की है। उसी श्रेणी में हमारा भी यह एक प्रयत्न है जो कि हम उसकी सरल बोधगम्य टीका और आज-कल की अति प्रिय खड़ी बोली की कविता में भाव पूर्ण अनुवाद आप सब के सामने उपस्थित करने में समर्थ हो सके हैं। हमने इस बात का पूर्ण प्रयत्न किया है कि मूल श्लोक के किसी भी पद का भाव शेष न रह जावे हमारे इस सरल पद्यानुवाद से संस्कृतानभिज्ञ पाठक पाठिकाओं को वही रसास्वाद और आनन्दानुभव होगा जो मूल के पढ़ने वाले संस्कृतज्ञों को होता है। प्रचार की दृष्टि से प्रस्तुत-पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने के लिए हमने इसमें ऋद्धि-मंत्र-विधि और उसके फल के साथ २ महामुनि सोमसेन कृत भक्तामर महाकाव्य मंडल पूजा भी जोड़ दी है। यह पूजा अभी तक की प्रकाशित तमाम भक्तामर संस्कृत पूजाओं से भिन्न है और कहीं से इसका प्रकाशन नहीं हुआ है।

धन्यवाद-पुष्पाञ्जलि

भक्तामर महाकाव्य मंडल पूजा की मूल प्रति सरधना जिला मेरठ के शास्त्र भंडार से खुरई निवासी श्री आयुर्वेदाचार्य पं० विमल-कुमार जी वैद्य को प्राप्त हुई थी। वैद्य जी के हम बहुत २ आभारी हैं जिन्होंने मेरे अनुरोध और आग्रह पर उसकी प्रतिलिपि को इस पुस्तक के साथ प्रकाशित करने की स्वीकृति दी है। साहित्यिक दृष्टि से पूजा बहुत ही सुन्दर है। इसके संशोधन में हमारे सहाध्यायी अनेक जैन ग्रन्थों के लेखक श्रीमान् पं० मोहनलाल जी जैन काव्य-तीर्थ जबलपुर वालों ने जो सहायता प्रदान की है उसके लिए मैं

उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूं। वास्तव में आपने इस पूजा का संशोधन करके उसमें नया जीवन डाल दिया है। भक्तामर के पद्यानुवाद के संशोधन में हमें उदीयमान तरुण कवि श्री फूलचन्द्र जी जैन 'पुष्पेन्दु' अध्यापक—जैन गुरुकुल खुरई से अधिक सहयोग मिला, अतएव उनका भी आभार माने बिना हम नहीं रह सकते।

इस पुस्तक के लिखे जाने के बाद मैंने अपने कई आदरणीय विद्वान् मित्रों को दिखाई, जिनमें श्रीमान् पं० जगन्मोहनलाल जी शास्त्री कटनी, पं० हीरालाल जी साहित्यरत्न शास्त्री देहली, पं० बंशीधर जी जैन व्याकरणाचार्य बीना, पं० परमेष्ठीदास जी जैन न्यायतीर्थ ललितपुर, पं० शुभचन्द्र जी न्यायतीर्थ भेलसा, पं० मोहनलाल जी काव्यतीर्थ जबलपुर, बाबू मूलचन्द्र जी जैन एम. ए. भेलसा, बाबू अमोलकचन्द्र जी जैन प्रेसीडेन्ट—म्यु० क० खंडवा आदि के नाम मुख्य हैं। इन कृपालु मित्रों ने इस पुस्तक के विषय में जो अपनी बहुमूल्य सम्मतियां तथा सूचनाएं दी हैं, उनके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूं।

जैन समाज के उद्भट विद्वान् श्रीमान् पं० महेन्द्रकुमार जी जैन न्यायाचार्य न्यायाध्यापक हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस तथा पूज्य गुरुवर्य श्री पं० फूलचन्द्र जी जैन सिद्धान्त शास्त्री संचालक—वर्णी जैन ग्रन्थ माला काशी ने जो इस पुस्तक के विषय में दो शब्द लिखने की महती कृपा की है, एतदर्थ मैं उनका अत्यन्त आभार मानता हूं। श्री बाबू मनोहरलाल जी जैन मालिक—सैन्ट्रल इण्डिया प्रेस, क्लॉथ मार्केट देहली, ने इस पुस्तक की छपाई आदि का काम अपनी निजी देख रेख में कराया है अतः वे धन्यवाद के पात्र हैं। और सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र तो निम्नलिखित वे उदार हृदय परम धर्म निष्ठ व्यक्ति हैं जिनके आर्थिक सहयोग से यह अति पवित्र पुस्तक दो हजार की संख्या में आपके हाथों में पहुँच रही है—मैं इन सरल हृदय महानुभावों का जितना भी उपकार मानूं—मरयल्प ही होगा।

शुभ नाम और संक्षिप्त-परिचय

५०० प्रतियाँ श्री मोतीलाल जी सूरजमल जी छावड़ा खंडवा फर्म के सफल संचालक श्री भाई नाथालाल जी छावड़ा की ओर से छपी हैं। आप शुद्ध खद्दर की सीधी-सादी पोशाक में सादगीमय जीवन व्यतीत करते हैं। राष्ट्र से अपूर्व प्रेम है। धर्म और समाज के कार्यों में सदा अग्रसर रहते हैं। शास्त्र स्वाध्याय के अच्छे प्रेमी हैं। नाम के इच्छुक नहीं किन्तु काम अधिक प्रिय है। अपने श्रम से न्यायोपात्त लक्ष्मी को अच्छे उपयोग में व्यय करना जीवन का ध्येय है। अहंकार से परे परन्तु स्वाभिमानी अधिक हैं। आपने कई पुस्तकें आर्थिक सहायता देकर छपाई हैं। मेरी कामना है कि आप इसी तरह उदार बने रहकर जैन साहित्य की अभिवृद्धि करते रहें।

५०० प्रतियाँ फरुखनगर (गुड़गाँवा) निवासी श्रीयुत बाबू रतनलाल जी जैन ४५४ वकीलपुरा देहली की ओर से छपी हैं। आप बड़े ही हँसमुख, मिलनसार, सहृदय उदारमना और धार्मिक सज्जन पुरुष हैं। पूजा सामायिक और स्वाध्याय से अधिक प्रेम है। जागृति एवं सुधार के कार्यों में आप सदा सहयोग देते रहते हैं। समाज की पततोन्मुखी दशा देखकर सदा चिन्ताशील रहते हैं। श्री सम्मेदशिखर जी (श्री पार्श्वनाथ हिल) स्टेशन का जो ऊंचा प्लेटफार्म बनकर तैयार हो गया है वह इन्हीं के भरसक प्रयत्नों का फल है। वीर-जयन्ती की आम छुट्टी करवाने का भी पूर्ण प्रयत्न आपकी ओर से चालू है। देहली की कई जैन संस्थाओं के सम्मानित सदस्य हैं। थोड़ी सी मासिक आय होकर भी आप के मन में साहित्योद्यान के सुरक्षित रखने की सदा आकांक्षा बनी रहती है। अपने व्यय से कई पुस्तकों का प्रकाशन करा चुके हैं। चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग इसी तरह होता रहे, यही हमारी कामना है।

५०० प्रतियाँ स्वर्गीय ला० पूरनलाल किशोरीलाल धूमसिंह जैन सुपुत्र ला० मनोहरलालजी जैन सिकन्द्राबाद (जि० बुलन्दशहर) की ओर से प्रकाशित की गई हैं।

२२५ प्रतियां श्री फुंदीलाल जी जैन भोपाल वालों की ओर से छपी हैं। आप एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। प्रति दिन अभिषेक पूर्वक पूजन सामायिक स्वाध्याय करने का आपका नियम है। सरल परिणामी हैं। गत वर्ष आपने बड़े ही उत्साह से आष्टान्हिक पर्व में सिद्धचक्र विधान कराया था। जिसमें पांच हजार रु० खर्च किया था। उसी अवसर पर मेरे विशेष आग्रह से आपने ५०१) रु० जैन गुरुकुल तथा १०१) रु० कुन्थुसागर स्वा० सदन खुरई को प्रदान किये थे। आपकी अभिरुचि धर्म की ओर इसी प्रकार बनी रहे, यही मेरी मनोकामना है।

१७५ प्रतियां मेरी उस आय से छपी हैं जिसको मैं जान बूझकर यहां लिखना नहीं चाहता।

५० प्रतियां श्री भाई बाबूलालजी जैन रोंडा हाल खुरई वालों की ओर से छपी हैं। आप बड़े ही धर्मात्मा व्यक्ति हैं। धार्मिक कार्यों में सदा अग्रसर रहते हैं। आपने अपने लघु भ्राता की शादी के उपलक्ष्य में जो दान दिया था उसी द्रव्य से ये प्रतियां प्रकाश में आ रही हैं।

२५ प्रतियां श्रीयुत बाबूलाल जी जैन इटारसी वालों की सुपुत्री की शादी के उपलक्ष्य में प्राप्त दान द्रव्य से छपी हैं।

महानुभाव ! इस भक्ति रस के पुण्यमय पवित्र स्तोत्र से—जैन समाज में धार्मिक भावना की अभिवृद्धि हो, विश्व का दूषित वायु मंडल अति पवित्र हो, धर्मीजनों के हृदयों को शांति व आल्हाद का लाभ हो।

यही इस प्रकाशन का मेरा हार्दिक प्रयोजन है। इस प्रकाशन में अल्पज्ञता-दृष्टि दोष तथा प्रमाद वश कोई अशुद्धियां रह गई हों तो वाचक वृन्द मुझे उसकी सूचना देने की कृपा करें, ताकि दूसरे संस्करण में वे सुधार दी जावें। जय-वीर

कमलकुमार जैन शास्त्री "कुमुद"
खुरई (सागर) म० प्र०

श्री कुन्थुसागर स्वाध्याय-सदन खुरई का

अगला द्वितीय भव्य प्रकाशन

कल्याणमन्दिरस्तोत्र

सरल अन्वयार्थ नूतनपद्यानुवाद

ऋद्धि-मंत्र-विधि-फल तथा ४४ यन्त्रों के आकार सहित

शीघ्र प्रकाशित होगा, प्रतीक्षा कीजिये ।

ॐ

श्री आदिनाथाय नमः

श्रीमन्मानतुङ्गाचार्य विरचित

भक्तामर-महाकाव्य

सरल-छन्द-अर्थ-ऋद्धि-मंत्र-फल-विधि-सहित

[१]

सर्व विघ्न विनाशक

भक्तामर प्रणत मौलि मणि प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित पाप तमोवितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥

हिन्दी पद्य

भक्त अमर नत मुकुट सुमणियों की सु-प्रभा का जो भासक ।
पाप रूप अति सघन तिमिर का ज्ञान-दिवाकर-सा नाशक ॥
भव-जल पतित जनों को जिसने दिया आदि में अवलम्बन ।
उनके चरण-कमल का करते सम्यक बारम्बार नमन ॥

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं स्वाहा ।

(मंत्र) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं श्रीं क्लीं ब्लूं क्रौं ॐ ह्रीं नमः स्वाहा ।

(विधि) श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन ऋद्धि और मंत्र १०८ बार जपने से समस्त विघ्न नाश होते हैं ।

सकल रोग नाशक

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय चित्त हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥

हिन्दी पद्य

सकल वाङ्मय तत्व बोध से उद्भव पटुतर धी-धारी ।
उसी इन्द्र की स्तुति से है वन्दित जग-जन मन-हारी ॥
अति आश्चर्य कि स्तुति करता उसी प्रथम जिनस्वामी की ।
जगनामी-सुखधामी तद्भव शिवगामी-अभिरामी की ॥

हे सर्व विघ्न-विनाशक ! अति विनयावनत भक्त देवों के झुके हुए स्वर्ण-मुकुटों की मणियों की कान्ति को चमकाने वाले, दुष्कृत्य रूपी गाढ़ान्धकार को दूर करने वाले, संसार-सागर में डूबते हुए प्राणियों को कर्म-भूमि की आदि में सहारा देकर संरक्षण करने वाले जिनेन्द्रदेव के पवित्र पाद-पद्मों की वंदना करके अति आश्चर्य है कि मैं (मानतुङ्ग) भी युगादि पुरुष प्रथम तीर्थंकर श्री वृषभदेव की प्रार्थना प्रारम्भ करता हूँ कि जिनकी स्तुति समस्त शास्त्र (द्वादशांगपाठी) वेत्ता सुराधिपों ने तीनों लोकों के चित्त हरण करने वाले मनोहर एवं महान् स्तोत्रों के द्वारा की थी। (प्रथम तथा द्वितीय श्लोक का अर्थ)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो ॐ ह्रीं जिणाणं (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं नमः (विधि) श्रद्धा सहित लगातार ७ दिन तक १००० बार ऋद्धि-मंत्र जपने से समस्त रोग शान्त हो जाते हैं।

सर्व सिद्धि दायक

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ !
स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।

हिन्दी पद्य

स्तुति को तय्यार हुआ हूँ मैं निर्बुद्धि छोड़ के लाज ।
विज्ञ जनों से अर्चित हे प्रभु मंद बुद्धि की रखना लाज ॥
जल में पड़े चन्द्र-मंडल को बालक बिना कौन मतिमान ।
सहसा उसे पकड़ने वाली प्रबलेच्छा करता गतिमान ॥

विद्वान् देवताओं द्वारा जिनके मणि-मुक्ता युक्त स्वर्ण-सिंहासन की अभ्यर्चना की जाती है ऐसे हे जिनेन्द्र देव ! भगवती सरस्वती की अनन्य अनुकंपा बिना बुद्धिहीन निर्लज्ज मैं निःसंकोच आपके अनन्त गुण समूह की स्तुति करने के लिए उद्यत हो गया हूँ, सो यह मेरी धृष्टता जल में पड़ने वाली चन्द्रमा की लुभावनी परछाँही को पकड़ने की इच्छा करने वाले अबोध बालक की ही भांति है ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहि जिणाणं ।

(मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सिद्धेभ्यो बुद्धेभ्यः सर्वसिद्धिदायकेभ्यो नमः स्वाहा ।

(विधि) श्रद्धापूर्वक सात दिन तक प्रतिदिन त्रिकाल १०८ बार ऋद्धि मंत्र जपने से सर्व सिद्धियां प्राप्त होती हैं ।

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति
तच्चाम्र चारुकलिकानिकरैकहेतु ॥

हिन्दी पद्य

अल्पश्रुत हूँ श्रुतवानों से हास्य कराने का ही धाम ।
करती है वाचाल मुझे प्रभु भक्ति आपकी आठों याम ॥
करती मधुर गान पिक मधु में जग जन मन हर अति अभिराम ।
उसमें हेतु सरस फल फूलों के युत हरे-भरे तरु-आम ॥

हे देव ! जैसे वसंतऋतु में आम की सुन्दर-सुगंधित मनोहारी मंजरियाँ सब पक्षियों में देखने में असुन्दर काली-कोयल को ही कुहू २ की मिठास भरी प्यारी बोली में गीत गाने के लिए प्रेरित करती है वैसे ही विज्ञ समाज के समक्ष अल्पज्ञानी होने के कारण मैं कोयल की भांति हँसी का पात्र अवश्य हूँ तो भी आपकी प्रगाढ़ भक्ति रूपी मंजरियां जबरन सुन्दर शब्दों में गूंथी जाने वाली स्तुति रचने के लिये वाध्य करती हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो कुट्ठ बुद्धीणं (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रां श्रीं श्रूं श्रः हं सं थ थ थः ठः ठः सरस्वती भगवती विद्या प्रसादं कुरु २ स्वाहा

(विधि) २१ दिन तक प्रतिदिन १००० वार ऋद्धि-मंत्र को श्रद्धा सहित जपने से बहुत शीघ्र विद्या आती है ।

सर्वदुरित संकट क्षुद्रोपद्रव निवारक

त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं
पापं क्षणात्क्षयमुपैतिशरीरभाजाम् ।
आक्रान्त लोकमलिनीलमशेषमाशु
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥

हिन्दी पद्य

जिनवर की स्तुति करने से चिर संचित भविजन के पाप ।
पल भर में भग जाते निश्चित इधर-उधर अपने ही आप ॥
सकल लोक में व्याप्त रात्रि का भ्रमर सरीखा काला ध्वान्त ।
प्रातः रवि की उग्र किरण लख हो जाता क्षण में प्राणान्त ॥

हे प्रभो ! जैसे प्रातःकालीन बाल-रवि की तेज किरणों के निकलते ही विश्व के कोने २ में व्याप्त और भंवरों की तरह काला, रात्रि का सघन अन्धकार देखते २ विलीन हो जाता है वैसे ही आप की अनन्य भक्ति पूर्ण स्तुति से प्राणियों के भव भवान्तरों के संचित समस्त पाप पल भर में नाश हो जाते हैं और उनकी आत्माओं में एक प्रकार का अलौकिक आलोक जगमगा उठता है जिससे वे पुनः पाप की ओर नहीं दौड़ते।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीज बुद्धीणं (मंत्र) ॐ ह्रीं हं सं श्रां श्रीं क्रौं क्लीं सर्वदुरितसंकटक्षुद्रोपद्रवकष्ट निवारणं कुरु २ स्वाहा

(विधि) २१ दिन तक प्रति दिन १०८ बार ऋद्धि-मन्त्र भाव सहित जपने से किसी प्रकार का विष नहीं चढ़ता। तथा कंकरी को १०८ बार मंत्रित कर सर्प के सिर पर मारने से सर्प कीलित हो जाता है।

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी दलेषु
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूद बिन्दुः ॥

हिन्दी पद्य

मैं मति-हीन-दीन प्रभु तेरी शुरू करूं स्तुति अघ हान ।
प्रभु-प्रभाव ही चित्त हरेगा सन्तों का निश्चय से मान ॥
जैसे कमल-पत्र पर जल-कण मोती कैसे आभावान ।
दिपते हैं फिर छिपते हैं असली मोती में हे भगवान ॥

हे अघतम नाशक ! मैं अति दीन एवं बुद्धिहीन आपको पाप विमोचक मानकर आप की यह पुनीत प्रार्थना प्रारम्भ कर रहा हूं जिस प्रकार कमलिनी के चिकने कोमल पत्तों पर पड़ी हुई पानी की नन्हीं २ गोल बूंदें उनके हरित वर्ण पत्तों के प्रभाव से जगमगाते मोतियों की तरह प्रभा को प्राप्त कर मानवों के चित्त को हरण करती हैं उसी प्रकार यह प्रार्थना आपके प्रभाव से सज्जन जनों के मन को अवश्य प्रमुदित करेगी।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहंताणं णमो पादाणु सारियं
(मंत्र) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं स्वाहा। ॐ ह्रीं लक्ष्मण रामचन्द्र देव्यै नमः स्वाहा
(विधि) २१ दिन तक प्रति दिन श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र का जाप करने से सब प्रकार के अरिष्ट मिट जाते हैं।

सप्त भय संहारक, अभीप्सित फल दायक

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥

हिन्दी पद्य

दूर रहे स्तोत्र आप का जो कि सर्वथा है निर्दोष ।
पुण्य-कथा ही किन्तु आपकी हर लेती है कल्मष-कोष ॥
प्रभा प्रफुल्लित करती रहती सर के कमलों को भरपूर ।
फेंका करता सूर्य--किरण को आप रहा करता है दूर ॥

हे पुण्यावतंश ! दैदीप्यमान दिनकर (सूर्य) की प्रखर किरणों का तेज प्रकाश तो दूर रहा, उसकी उषाकालीन बाल-प्रभा ही सरोवरों (तालावों) में सरोज (कमल) समुदाय को विकसित करने में अनोखी क्षमता रखती है, उसी तरह आपकी समस्त दोषों को दूर करने वाली निर्दोष स्तुति तो दूर रही आपके शुभ-नाम एवं लोक-परलोक की पुण्यमयी सुकथा का स्मरण करने मात्र से सांसारिक पतित प्राणियों के पाप नाश हो जाते हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं णमो संभिण्ण सोदराणं ह्रां ह्रीं ह्रूं फट् स्वाहा (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं क्रौं क्ष्रीं रः रः हं हः नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धापूर्वक चार कंकरी १०८ बार मंत्र कर चारों दिशाओं में फेंकने से पथ कीलित हो जाता है तथा सप्तभय भाग जाते हैं ।

कूकर विष निवारक

नात्यद्भुतं भुवनभूषणभूत नाथ !
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभीष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥

हिन्दी पद्य

त्रिभुवन तिलक जगपति हे प्रभु ! सद्गुरुओं के हे गुरुवर्य्य ।
सद्भक्तों को निज सम करते इसमें नहीं अधिक आश्चर्य ॥
स्वाश्रित जन को निज सम करते धनी लोग धन धरनी से ।
नहीं करें तो उन्हें लाभ क्या ? उन धनिकों की करनी से ॥

हे भुवन-भूषण ! जगती-तल में जो पुरुष आप में स्थित सत्य अहिंसादि श्रेष्ठतम अनन्त गुणों की स्तुति करके समयान्तर में यदि आप ही के समान जगत्पूज्य परमात्मा बन जाते हैं तो इसमें कोई विशेष आश्चर्य नहीं है और न कोई अनोखापन ही है, क्योंकि जो स्वामी उदार चित्त होते हैं, वे अपने अधीनस्थ सेवकों को आर्थिक सहायता द्वारा अपने ही समान बराबरी वाला बना लेते हैं, किन्तु जो ऐसा नहीं करते-अपने आश्रितों को आप समान नहीं बनाते तो फिर उसके स्वामित्व से लाभ ही क्या है ? अर्थात् कुछ भी नहीं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धीणं (मंत्र) जन्म सध्यानतो जन्मतो वा मनोत्कर्षधृतावादि नोर्यानाचान्ताभाते प्रत्यक्षा बुद्धान्मनो ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः श्रां श्रीं श्रूं श्रः सिद्धबुद्धकृतार्थो भव २ वषट् सम्पूर्णं स्वाहा (विधि) श्रद्धा पूर्वक नमक की ७ डली लेकर प्रत्येक को १०८ बार मंत्रित कर खाने से कुत्ते के विष का असर नहीं होता।

अभीप्सित-आकर्षक

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः
क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ?

हिन्दी पद्य

हे अनिमेष विलोकनीय प्रभु ! तुम्हें देख कर परम-पवित्र।
तोषित होते कभी नहीं हैं नयन मानवों के अन्यत्र ॥
चन्द्र-किरण सम उज्ज्वल निर्मल क्षीरोदधि का कर जलपान।
कालोदधि का खारा पानी पीना चाहे कौन पुमान ? ॥

हे दर्शनीय अद्वितीय देव ! लगातार टिमकार रहित विस्फारित आलुलायित नेत्रों से निरखने योग्य आपकी निर्विकार वीतराग नाशाग्रवर्ति सुन्दर छवि देखकर मोक्षाभिलाषी मानवों के नेत्र देवता कहे जाने वालों की सराग मुद्रा को देखने से संतोषित नहीं होते क्योंकि सच तो यह है कि चन्द्र-किरण के सदृश क्षीर-सागर का निर्मल-मधुर जल पीकर ऐसा कौन पागल पुरुष होगा जो लवण समुद्र के खारे पानी पीने की अभिलाषा करेगा ? कोई नहीं !

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेय बुद्धीणं (मंत्र) ॐ ह्रां श्रीं क्लीं ध्रां श्रीं कुमति निवारिण्यै महामायायै नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित २१ दिन तक प्रतिदिन १०८ बार ऋद्धि मंत्र जपने से जिसे बुलाने की उत्कंठा हो वह आ सकता है।

हस्ति—मद विदारक, वांछित रूप प्रदायक

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां
यत्ते समानमपरं नहि रूपमस्ति ॥

हिन्दी पद्य

जिन जितने जैसे अणुओं से निर्मापित प्रभु तेरी देह ।
थे उतने वैसे अणु जग में शांत-राग मय निःसन्देह ॥
हे त्रिभुवन के शिरोभाग के अद्वितीय आभूषण रूप ।
इसीलिए तो आप सरीखा नहीं दूसरों का है रूप ॥

हे त्रिभुवन-तिलक ! जिन २ शांत सौम्य विशुद्ध भावों की प्रतिच्छाया रूप रम्य परमाणुओं से शरीर नाम कर्म ने आपके कमनीय कनक-वदन का निर्माण किया था। उस समय संसार में निश्चय से वे दिव्य-परमाणु उतने ही थे—अधिक नहीं थे। यही कारण है कि जगती-तल में आपके समान शांत मुद्रा युक्त अनुपम सुहावना रूप किसी अन्य पुरुष या देवता का देखने में नहीं आता। (सारांश) आपकी कान्ति के समक्ष संसार के सभी देवताओं की क्रान्ति वास्तविक कान्ति न होने से तेजहीन हो जाती है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो वोहि बुद्धीणं (मंत्र) ॐ आं आं अं अः सर्व राजा प्रजा मोहिनी सर्वजन वश्यं कुरु कुरु स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ४२ दिन तक प्रति दिन १००० ऋद्धि-मंत्र जपना चाहिए। एक पाव तिल तेल को उक्त मंत्र से मंत्रित कर हाथी को पिलाने से उसका मद उतर जाता है।

लक्ष्मी-सुख प्रदायक, स्वशरीर रक्षक

वक्त्रं क ते सुरनरोरगनेत्रहारि—
निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क मलिनं क निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डु पलाश कल्पम् ॥

हिन्दी पद्य

कहाँ आप का मुख अति सुन्दर सुर-नर-उरग नेत्र-हारी ।
जिसने जीत लिये सब जग के जितने थे उपमा धारी ॥
कहाँ कलंकी बंक चन्द्रमा रंक समान कीट-सा दीन ।
जो पलाश-सा फीका पड़ता दिन में हो करके छवि-छीन ॥

हे अनुपम सुन्दरता की साकार मूर्ति रूप भगवन् ! आप के श्री मुख को देख कर जो कवि चन्द्र-बिम्ब की उपमा दे डालते हैं, वे भूल जाते हैं, कि सुर-असुर-खेचर इन्द्र-धरणेन्द्र चक्रवर्ती एवं मानवों के नेत्रों को मुग्ध करने वाला अतः अतिप्रिय तथा त्रिभुवन की सर्व सुन्दर उपमाओं को हरा देने वाला, अतः अति कमनीय कहां तो आपका अनुपम सुन्दर मुख और कहां कलंक से मलिन चन्द्र-बिम्ब जो दिन में पलाश-पत्र सा फीका पड़ जाता है अतः चन्द्रमा की उपमा आपको उपयुक्त नहीं जचती ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो ऋजुमदीणं (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं हं सः हौं ह्रां ह्रीं द्रां द्रीं द्रौं द्रः मोहनी सर्वजनवश्यं कुरु २ स्वाहा

(विधि) श्रद्धा सहित ७ दिन तक प्रति दिन १००० ऋद्धि-मंत्र का जप करने तथा ७ कंकरियों को १०८ बार मंत्रित कर चारों ओर फेंकने से चोर चोरी नहीं कर पाते और रास्ते में भय नहीं रहता ।

आधि-व्याधि नाशक

सम्पूर्ण मण्डलशशाङ्ककलाकलाप—
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥

हिन्दी पद्य

तव गुण पूर्ण शशाङ्क कान्तिमय कला-कलापों से बढ़के ।
तीन लोक में व्याप रहे हैं जो कि स्वच्छता में चढ़के ॥
विचरें चाहे जहाँ कि जिनको जगन्नाथ का एकाधार ।
कौन माई का जाया रखता उन्हें रोकने का अधिकार ॥

हे जगदीश्वर ! जैसे पूर्णचन्द्र की समस्त कलाओं का प्रकाश उससे जुदा न होने पर भी संसार के कोने २ में व्याप्त हो जाता है वैसे ही आपके समस्त प्रकाशमान पवित्र गुण आप में समाये हुये होने पर अपनी उत्तमत्ता के कारण विश्व व्यापी हो रहे हैं—ठीक तो है—जिन्होंने आप जैसे त्रिलोकीनाथ का आश्रय पा लिया है फिर भला उन उत्तम गुणों को स्वेच्छानुसार सब जगह विचरण करने से कौन रोक सकता है ? कोई नहीं। आपके सब गुण सब के लिये आदरणीय हैं अतः जन हितकारी होने से सब के उपयुक्त सिद्ध हुए इसीलिये वे विश्वव्यापी हैं !

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो विपुल मदीणं (मंत्र) ॐ नमो भगवती गुणवती महा मानसी स्वाहा (विधि) श्रद्धापूर्वक ७ कंकरियों को २१ बार मंत्रित कर चारों ओर फेंकने से आधि-व्याधि शत्रु आदि का भय मिट जाता है और लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ।

सन्मान-सौभाग्य-संवर्द्धक

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि—
नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम्।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित्॥

हिन्दी पद्य

मद की छकीं अमर ललनाएँ प्रभु के मन में तनक विकार।
कर न सकीं आश्चर्य कौन सा रह जाती हैं मन को मार॥
गिरि गिर जाते प्रलय पवन से तो फिर क्या वह मेरु-शिखर।
हिल सकता है रंच-मात्र भी पाकर झंझावात प्रखर॥

हे अनङ्गजीत! प्रलय कालीन प्रचंड पवन पर्वतों को प्रकम्पित कर देती है किन्तु वही पर्वतराज सुमेरु पर्वत के ऊँचे शिखर को रंचमात्र भी चलायमान करने में समर्थ नहीं होती। ठीक इसी तरह मद से छकीं देवाङ्गनाओं का दिव्य लावण्य और कामाग्नि को उद्दीप्त करने वाली उनकी तरुणाई युक्त अंगड़ाइयां ब्रह्मा जैसे महान् तपस्वी के मन को डिगा कर उनके चतुर्मुख निर्माण करा सकतीं हैं किन्तु वे आपके मन में विकार पैदा न कर सकीं तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो दशपुव्वीणं (मंत्र) ॐ णमो भगवती गुणवती सुसीमा पृथ्वी वज्रशृंखला मानसी महामानसी स्वाहा (विधि) श्रद्धापूर्वक १४ दिन १००० जाप करे। २१ बार तेल मंत्रित कर मुख पर लगाने से सभा में सम्मान बढ़ता है।

सर्व विजय दायक

निर्धूम वर्तिरपवर्जिततैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटी करोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः॥

हिन्दी पद्य

धूम न बत्ती तैल बिना ही प्रकट दिखाते तीनों लोक।
गिरि के शिखर उड़ाने वाली बुझा न सकती मारुत-झोक॥
तिस पर सदा प्रकाशित रहते गिनते नहीं कभी दिन-रात।
ऐसे अनुपम आप दीप हैं स्व-पर-प्रकाशक जग विख्यात॥

हे लोकालोक-प्रकाशक ! मर्यादित प्रकाश फैलाने वाला, घर का दीपक, बिना तेल बत्ती के नहीं जलता और न वह हवा के थपेड़ों को सह सकता है, परन्तु आप लोक-अलोक को सदा प्रकाशित करने वाले अपूर्व-स्व-परप्रकाशी दीपक हो; जिसमें न राग रूपी तेल है, न काम रूपी बत्ती है, न द्वेष रूपी धुआँ है और न जिसे पर्वतों के ऊँचे शिखरों को हिला देने वाली हवा ही कभी बुझा सकती है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो चवदश पुव्वीणं (मंत्र) ॐ णमो मंगला सुसीमा नाम देवी सर्व समीहितार्थं वज्र शृंखलां कुरु २ स्वाहा (विधि) ३ दिन तक प्रतिदिन श्रद्धा सहित १००० ऋद्धि-मंत्र जपने से राज-दरबार में प्रतिवादी की हार होती है; और शत्रु का भय नहीं रहता।

सर्वरोग प्रतिरोधक

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर निरुद्धमहाप्रभावः
सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ॥

हिन्दी पद्य

अस्त न होता कभी न जिसको, ग्रस पाता है राहु प्रबल ।
एक साथ बतलाने वाला, तीन लोक का ज्ञान विमल ॥
रुकता कभी प्रभाव न जिसका, बादल की आकर के ओट ।
ऐसी गौरव-गरिमा वाले, आप अपूर्व दिवाकर कोट ॥

हे त्रिभुवन प्रकाशक ! एक निश्चित घेरे में घूमने वाला सूर्य, जो कि दिन में प्रकाश फैलाकर सायंकाल अस्त हो जाता है और जिसे राहु ग्रस लेता है, या बादलों की ओट में आकर अपने प्रताप को खो देता है, ऐसे देखे जाने वाले सूर्य से भी अधिक दिन-रात प्रकाश देने वाले आप स्वयं एक अपूर्व सूर्य हैं। आपको न तो दुष्कृत्य रूप राहु ग्रस पाता है, न आपके प्रखर तेज को मेघ ही ढांक पाते हैं। आप सदा विश्व के चराचर पदार्थों को प्रकाशित करते रहते हैं, अतः करोड़ों सूर्यों से अधिक प्रकाश करने वाले आप अपूर्व सूर्य हैं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठांग महा कुशलाणं (मंत्र) ॐ णमो णमि ऊण अट्ठे मट्ठे क्षुद्र विघट्ठे क्षुद्रपीड़ा जठरपीड़ा भंजय २ सर्वपीड़ा सर्वरोग निवारणं कुरु २ स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित ७ दिन तक १००० जाप जपना चाहिये, कटूरा पानी २१ बार मंत्रित कर पिलाने से शारीरिक सभी रोग दूर हट जाते हैं।

शत्रुसैन्य स्तम्भक

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्ज मनल्प कांति
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥

हिन्दी पद्य

मोह महातम दलने वाला, सदा उदय रहने वाला ।
राहु न बादल से दबता पर, सदा स्वच्छ रहने वाला ॥
विश्व प्रकाशक मुख-सरोज तव, अधिक कांति मय शांतस्वरूप ।
है अपूर्व जगका शशि-मण्डल, जगत शिरोमणि शिवका भूप ॥

हे अपूर्व तेज पुंज ! जिस चन्द्रबिम्ब को हम देखते हैं वह सकलंक है, केवल रात में अधूरा प्रकाश फैलाकर असम्पूर्ण अंधकार को नाश करता है, राहु और मेघ पटल से ढ़का जाकर उसका प्रकाश मंद पड़ जाता, है—अस्त भी होता है; किन्तु आपका मुख-कमल एक ऐसा दीप्तिवान विलक्षण चन्द्रमा है, जो निष्कलंक है, सदा-सर्वदा प्रकाशमान रह कर मोहान्धकार का नाश करता है, जिसे न राहु ग्रस सकता है, न बादल ही काला शामियाना तानकर उसके अपूर्व प्रकाश को रोक सकता है। वास्तव में आपका मुख-चन्द्र अगणित चन्द्र-बिम्बों से बढ़कर है ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउयणयट्ठिपत्ताणं (मंत्र) ॐ नमो भगवते जय विजय मोहय २ स्तम्भय २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ७ दिन तक १००० जाप जपना चाहिये । १०८ वार ऋद्धि मंत्र जपने से शत्रु सैन्य स्तम्भित हो जाती है ।

उच्चाटनादि रोधक

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु दलितेषु तमःसु नाथ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः॥

हिन्दी पद्य

नाथ आपका मुख जब करता, अन्धकार का सत्यानाश।
तब दिन में रवि और रात्रि में, चन्द्र-बिम्ब का विफल प्रयास॥
धान्य-खेत जब धरती-तल के, पके हुये हों अति अभिराम।
शोर मचाते जल को लादे हुये, घनों से तब क्या काम?॥

हे अनन्त प्रभा धारक देव! जैसे धरती-तल में धान्य के खेतों के परिपक्व हो जाने पर, विपुल जल-भार से नीचे को झुके, उमड़ते-घुमड़ते-गरजते हुए बादलों से हानि की संभावना के सिवाय कोई विशेष लाभ नहीं होता; वैसे ही आपके अक्षय अनंत कांतिमान मुख रूपी विलक्षण चन्द्रमा ने जब कि संसार के कोने-कोने में व्याप्त समस्त तम-तोम का—अज्ञान रूपी घनान्धकार का सत्यानाश कर दिया हो, तो फिर दिन में सूर्य और रात्रि में चन्द्रमा का प्रकाश प्रदान करने रूप प्रयास व्यर्थ है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं (मंत्र) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः यक्ष ह्रीं वषट् नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र को १०८ बार जपने से अपने पर प्रयोग किये गये दूसरे के मंत्र जादू टोना टोटका मूठ उच्चाटनादि का भय नहीं रहता।

सन्तान-सम्पत्ति-सौभाग्य प्रसाधक

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥

हिन्दी पद्य

जैसा शोभित होता प्रभु का, स्वपर-प्रकाशक उत्तम ज्ञान।
हरिहरादि देवों में वैसा कभी नहीं हो सकता भान॥
अति ज्योतिर्मय महारतन का जो महत्व देखा जाता।
क्या वह किरणाकुलित कांच में अरे! कभी लेखा जाता।

हे ज्ञान पयोनिधे! जिस प्रकार लोकालोक के संख्यातीत पदार्थों की भूत भविष्यत वर्तमान कालीन अनंत पर्यायों को एक साथ एक समय में प्रकाशित कर देने वाला, मोह सुभट को नाश कर देने से प्राप्त स्वपर प्रकाशी केवल ज्ञान आप में शोभायमान है, वैसा ईश्वर के नाम पर पुजने वाले, ब्रह्मा-विष्णु महेशादि देवों में, वह नहीं पाया जाता; क्योंकि जैसा महत्त्व-प्रद जगमगाता प्रकाश रत्न-मणियों में देखा जाता है वैसा दिनकर की किरणों से चमकते हुए कांच के टुकड़े में नहीं हो सकता।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो चारणाणं (मंत्र) ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रः शत्रुभय निवारणाय ठः ठः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित प्रतिदिन ऋद्धि-मंत्र को १०८ बार जपने से सन्तान-सम्पत्ति सौभाग्य वुद्धि और विजय की प्राप्ति होती है।

सर्व सौख्य सौभाग्य साधक

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥

हिन्दी पद्य

हरिहरादि देवों का ही मैं, मानूं उत्तम अवलोकन।
क्योंकि उन्हें देखने भर से, तुझ से तोषित होता मन ॥
है परन्तु क्या तुम्हें देखने से, हे स्वामिन् ! मुझ को लाभ।
जन्म जन्म में भी न लुभा, पाते कोई यह मम, अमिताभ ॥

हे अगाध शांति-सिन्धु ! मैं राग द्वेष रूपी मैल से मलीन, हिंसक हथियारों से युक्त, विविध परिग्रह से संयुक्त, सपत्नीक, हरिहरादिक देवताओं का देखना, इसलिए अच्छा मानता हूं चूंकि उनके अवलोकन के बाद मन आपकी ओर आकृष्ट होकर परम संतोष का अनुभव करता है यह हमारे लिए सबसे बड़ा लाभ है और आपके देखने से क्या ? आपके दिव्य रूप एवं शांत मुद्रा को केवल एक बार, नजर भर देखने के बाद संसार का कोई देव इस भव में तो क्या, पर भव में भी मनको नहीं लुभा सकता। यह हमारे लिए सबसे बड़ी हानि है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्हसमणाणं (मंत्र) ॐ नमः श्री मणिभद्र जय विजय अपराजित सर्व सौभाग्यं सर्व सौख्यं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित मंत्र को ४२ दिन तक १०८ बार जपने से सब अपने वशवर्ती होते हैं और सुख सौभाग्य बढ़ता है।

भूत पिशाचादि बाधा निरोधक

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥

हिन्दी पद्य

सौ सौ नारीं सौ सौ सुत को, जनतीं रहतीं सौ सौ ठौर ।
तुम से सुत के जनने वाली, जननी महती क्या है और ?
तारागण को सर्व दिशाएँ, धरें नहीं कोई खाली ।
पूर्व दिशा ही पूर्ण प्रतापी, दिन-पति को जनने वाली ॥

हे अनुपम देव ! अवनीतल की सैंकड़ों स्त्रियां सैंकड़ों बार, सैंकड़ों स्थानों पर, सैंकड़ों पुत्रों को प्रसव करती हैं; किन्तु आपके समान सुन्दर-अपूर्व-तेजस्वी-महा पुण्यशाली पुत्र को सभी स्त्रियां प्रसव नहीं कर सकतीं । एक मात्र आपको ही माता को वह सातिशय सौभाग्य उपलब्ध हुआ, जो अपूर्व लावण्य युक्त तद्भव मोक्षगामी आप जैसे पुत्र रत्न को जन्म दे सकीं । सो ठीक ही है, सभी दिशाएं तारिकाओं को जन्म देती हैं, किन्तु सहस्र किरण समूह वाले सूर्यदेव को सिर्फ एक मात्र पूर्व दिशा ही प्रसव करती है, अन्य दिशायें नहीं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो आगासगामिणं (मंत्र) ॐ णमो वीरेहि जृंभय २ मोहय २ स्तम्भय २ अवधारणं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित हल्दी की गांठ को मंत्रित कर चबाने से डाकिनी शाकिनी भूत पिशाच चुडैलादि भाग जाते हैं ।

प्रेत बाधा निवारक

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः॥

हिन्दी पद्य

तुम को परम पुरुष मुनि मानें, विमल वर्ण रवि तमहारी।
तुम्हें प्राप्त कर मृत्युञ्जय के, बन जाते जन अधिकारी॥
तुम्हें छोड़ कर अन्य न कोई, शिवपुर पथ बतलाता है।
किन्तु विपर्यय मार्ग बता कर, भव-भव में भटकाता है॥

हे साक्षान्मोक्षमार्गरूपमुनीश! विषय वासनाओं पर विजय प्राप्त करने वाले साधु-सन्त आपको अवनीतल का सर्व श्रेष्ठ महापुरुष और कर्म शत्रुओं पर विजय पा लेने से अत्यन्त निर्मल तथा महा मोहान्धकार को नाश कर देने से सूर्य के समान तेजस्वी मानकर आपकी अहर्निशि आराधना किया करते हैं। तथा आपको प्राप्त कर वे मरण के महान् दुखों से छुटकारा पाकर अमरत्व प्राप्त कर लेते हैं, अतः आपको मृत्युञ्जय भी मानते हैं और आपके सिवाय संसार में, कोई दूसरा जनहितकारी श्रेष्ठ मार्ग न मानकर आपको ही साक्षात् मोक्षमार्ग रूप मानते हैं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं (मंत्र) ॐ नमो भगवती जयावती मम समीहितार्थं मोक्ष-सौख्यं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धासहित ऋद्धि-मंत्र को १०८ बार जपकर अपने शरीर की रक्षा करे, पश्चात् इसी मंत्र से झाड़ने पर प्रेत बाधा दूर होती है।

शिरोरोग शामक

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥

हिन्दी पद्य

तुम्हें आद्य अक्षय अनंत प्रभु, एकानेक तथा योगीश।
ब्रह्मा ईश्वर या जगदीश्वर, विदित योग मुनिनाथ मुनीश ॥
विमल ज्ञान मय या मकरध्वज, जगन्नाथ जगपति जगदीश।
इत्यादिक नामों कर मानें, सन्त निरन्तर विभो निधीश ॥

हे देवाधिदेव ! संसार के सन्त आपको अनेक उत्कृष्ट गुणों और शुभ नामों से सदा स्मरण किया करते हैं। अजर अमर होने से अक्षय, केवलज्ञान की अपेक्षा व्यापक, चिन्तवन से परे होने से अचिंत्य, अपरिमित गुण होने से असंख्य, कर्म भूमि की आदि में अवतीर्ण होने से आद्य, मोक्ष मार्ग के प्रणेता होने से ब्रह्मा, कृतकृत्य होने से ईश्वर, कभी नाश न होने से अनंत, कामजीत होने से अनंग केतु, भक्तों के आराध्य होने से योगीश्वर, प्रसिद्ध योगी होने से विदितयोगी, अनंत गुण पर्यायापेक्षया अनेक, अद्वितीय होने से एक, विमल ज्ञान होने से ज्ञान रूप और कर्म मल रहित होने से अमल अर्थात् निर्मल मानते हैं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि विसाणं (मंत्र) स्थावर जंगम वायकृतिमं सकलविषं यद्भक्तेः अप्रणमिताय ये दृष्टिविषयान्मुनीन्ते वड्ढमाण स्वामी सर्व हितं कुरु २ स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः असिआउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा (विधि) राख मंत्रित कर शिर में लगाने से शिर पीड़ा दूर होती है।

दृष्टिदोष विघातक

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधा—
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रय शंकरत्वात् ।
धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात्—
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥

हिन्दी पद्य

ज्ञान पूज्य है, अमर आपका, इसीलिए कहलाते बुद्ध ।
भुवनत्रय के सुख संवर्द्धक, अतः तुम्हीं शंकर हो शुद्ध ॥
मोक्ष-मार्ग के आद्य प्रवर्त्तक, अतः विधाता कहें गणेश ।
तुम सम अवनी पर पुरुषोत्तम, और कौन होगा अखिलेश ॥

हे पुरुषोत्तम ! विश्व की चराचर वस्तुओं को एक साथ एक समय में जान लेने वाला आपका बुद्धिबोध (केवलज्ञान) देव देवेन्द्रों द्वारा पूजित होने से आप बुद्ध कहे जाते हैं। सब प्राणियों को बिना भेद-भाव के सुख-शांति का पथ प्रदर्शन कर उन्हें आत्म कल्याण की ओर अग्रसर करते हैं अतः आपको शंकर कहते है । आपने कर्म बन्धन युक्त जीवों को संसार से छुटकारा पाने का रास्ता बता कर प्रतिबोधित किया है अतः आपको ब्रह्मा कहते हैं। अवनीतल पर आपके समान उपरोक्त गुणों वाला कोई दूसरा पुरुष पैदा नहीं हुआ है अतः आपको पुरुषोत्तम भी कहते हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं (मंत्र) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा झ्रां झ्रौं स्वाहा । ॐ नमो भगवते जयविजयापराजिते सर्व सौभाग्यं सर्व सौख्यं कुरु २ स्वाहा । (विधि) श्रद्धा सहित प्रति दिन ऋद्धि मन्त्र के जपने से नजर उतरती है और अग्नि का असर आराधक पर नहीं होता ।

अर्द्धशिर पीड़ा विनाशक

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय ।
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि शोषणाय ॥

हिन्दी पद्य

तीन लोक के दुःख हरण, करने वाले हे तुम्हें नमन ।
भू-मण्डल के निर्मल-भूषण, आदि जिनेश्वर तुम्हें नमन ॥
हे त्रिभुवन के अखिलेश्वर हो, तुम को बारम्बार नमन ।
भव-सागर के शोषक पोषक, भव्य जनों के तुम्हें नमन ॥

हे नमस्करणीय देव ! हम आपकी भक्ति करते हैं, विनय करते हैं, स्तुति करते हैं, नमस्कार करते हैं, क्यों ? इसलिए कि आप ही सब जीवों के समस्त दुःखों को दूर कर उन्हें राहत पहुँचाते हैं । आप ही अवनीतल के सर्वोत्तम अलङ्कार हैं । आप ही तीनों लोकों के एक मात्र उपास्य उत्कृष्ट ईश्वर हैं । आप ही संसार-समुद्र को सुखाकर मानवों को अजर अमर पद देने वाले सत्यदेव हैं । अतः हम, बार २ प्रणमन करते हैं । पुनश्च आप पूजक को, जगत्पूज्य बना लेते हैं, अतः आप अति नमस्करणीय हैं !

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्त तवाणं -(मंत्र) ॐ नमो ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रूं ह्रूं परजन शान्ति व्यवहारे जयं जयं कुरु २ स्वाहा । (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र द्वारा तेल को मंत्रित कर सिर पर लगाने से आधा शीशी (अर्द्धशिर) की पीड़ा दूर होती है ।

शत्रून्मूलक

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश।
दोषैरुपात्तविविधाश्रयजात - गर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि॥

हिन्दी पद्य

गुण समूह एकत्रित होकर, तुझ में यदि पा चुके प्रवेश।
क्या आश्चर्य न मिल पाये हों, अन्य आश्रय उन्हें जिनेश॥
देव कहे जाने वालों से, आश्रित होकर गर्वित दोष।
तेरी ओर न झांक सके ये, स्वप्नमात्र में हे गुण-कोष॥

हे गुणागार! संसार में दोष भी हैं और गुण भी हैं। दोनों अपने २ स्वभावानुसार उस ही ओर अधिक आकर्षित होते हैं जिस ओर उनको अधिक सन्मान मिलता है। अतः यदि सब गुणों ने आप द्वारा सन्मानित होकर आपका ही आश्रय ले लिया और आत्मा में इतने सघन रूप से आकर बस गये कि थोड़ा भी स्थान नहीं छोड़ा और दोषों को देवता भासों का सहारा मिलने से उन्हें आपके अन्तःकरण में रंच मात्र भी स्थान नहीं मिला, अतः स्वभावतः उन गर्वोन्मत्त दोषों ने आपकी ओर स्वप्न प्रतिस्वप्नावस्थाओं में भी नहीं निहारा तो इसमें कौनसा आश्चर्य है? अर्थात् कुछ भी नहीं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं (मंत्र) ॐ नमो चक्रेश्वरी देवी चक्रधारिणी चक्रेणानुकूलं साधय २ शत्रूनुन्मूलयोन्मूलय स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र की उपासना से आराधक को शत्रु भी हानि नहीं पहुंचा सकता।

सर्व मनोरथ प्रपूरक

उच्चैरशोकतरु — संश्रितमुन्मयूख-
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरण मस्त तमो वितानं-
विम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥

हिन्दी पद्य

उन्नत तरु अशोक के आश्रित, निर्मल किरणोन्नत वाला ।
रूप आपका दिपता सुन्दर, तम हर मन हर छवि वाला ॥
वितरण किरण निकर तमहारक, दिनकर घनके अधिक समीप ।
नीलाचल पर्वत पर होकर नीराजन करता ले दीप ॥

हे कान्तिमान देव ! दर्शनार्थी मानवों के शोक-संताप को दूर कर उनके चित्त को प्रफुल्लित करने वाले, उन्नत हरितवर्ण अशोकवृक्ष के नीचे पद्मासन मुद्रा में स्थित और ऊपर की ओर निकलती हैं कांतियुक्त किरणें जिसकी, ऐसा लावण्य-पूर्ण आपके शरीर का अत्यन्त निर्मल सुन्दर रूप वैसे ही शोभायमान होता है, जैसे प्रकाशमान किरणों वाला अंधकार नाशक सूर्य-विम्ब काली २ घटाओं के समीप मनोहर मालूम होता है । (प्रथम प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं (मंत्र) ॐ नमो भगवते जय-विजय जृंजय मोहय मोहय सर्वसिद्धि सम्पत्ति सौख्यं कुरु २ स्वाहा (विधि) प्रति दिन श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र १०८ वार जपने से सभी अच्छे कार्य सिद्ध होते हैं और व्यापार में भी लाभ होता है ।

नेत्रपीडा विनाशक

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे
विभ्राजते तववपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥

हिन्दी पद्य

मणि-मुक्ता किरणों से चित्रित, अद्भुत शोभित सिंहासन।
कान्तिमान कंचन-सा दिखता, जिसपर तव कमनीय वदन॥
उदयाचल के तुङ्ग शिखर से, मानो सहस्ररश्मि वाला।
किरण-जाल फैलाकर निकला, हो करने को उजियाला॥

हे रत्नजटित सिंहासनस्थ देव ! तपाये हुए सोने की चमकती आभा के समान आपका कांतिमान दिव्य सुन्दर मनोहारी शरीर, झिलमिलाती रत्न मणियों की किरण पंक्ति से सुशोभित, आश्चर्य जनक सिंहासन पर ऐसा ही शोभा देता है, जैसा कि उदयाचल पर्वत की उन्नत शिखर पर, सहस्र प्रखर किरण समूह का वितान (मंडप) तानता हुआ सुन्दर सूर्यबिम्ब। अर्थात् जैसे उदयाचल पर्वत की शिखर पर सूर्य शोभा पाता है वैसे ही रत्नजटित सिंहासन पर आपका शरीर शोभायमान होता है। (द्वितीय प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं (मंत्र) ॐ ह्रीं णमो णमिऊण पासं विसहर फुलिंगमंतो विसहर नाम रकार मंतो सर्व सिद्धि मी हे इह समरंताण मणणे जा गई कप्पद्दुमच्चं सर्व सिद्धि ॐ नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित प्रतिदिन १०८ बार ऋद्धि-मंत्र जपने से हर प्रकार की नेत्र पीड़ा दूर होती है।

शत्रु स्तम्भक

कुन्दावदातचलचामरचारु शोभं
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥

हिन्दी पद्य

ढुरते सुन्दर चँवर विमल अति, नवल कुंद के पुष्प समान ।
शोभा पाती देह आपकी, रौप्य धवल-सी आभावान ॥
कनकाचल के तुङ्ग शृङ्ग से, झर-झर झरता है निर्झर ।
चन्द्र-प्रभा सम उछल रही हो, मानो उसके ही तट पर ॥

हे समवशरण लक्ष्मी सुशोभित देव ! गगनाङ्गन में देवों द्वारा रचित समवशरण (सभा-स्थल) के मध्य स्वर्ण निर्मित कमल पर अधर विराजमान श्रीमान् के कनक कान्तिधारी सुन्दर अनुपम शरीर पर देवेन्द्रों द्वारा विकसित कुंद के फूलों के समान उज्ज्वल-निर्मल सफेद ढरते हुए चँवर ऐसे शोभायमान होते हैं, मानों जैसे झरनों की झर-झर करके उछलती हुई चन्द्रमा की नाईं स्वच्छ जल-धाराओं से स्वर्णमयी सुमेरु पर्वत के पार्श्वभाग (किनारे) अति सुशोभित होते हैं (तृतीय प्रातिहार्य का वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुणाणं (मंत्र) ॐ नमो अट्ठे मट्ठे क्षुद्रविघट्ठे क्षुद्रान् स्तम्भय २ रक्षां कुरु कुरु स्वाहा (विधि) श्रद्धा पूर्वक ऋद्धि मंत्र की आराधना करने से शत्रु का शौर्य नष्ट होता है ।

राज्य सम्मान दायक

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् ।
मुक्ताफलप्रकरजाल विवृद्ध शोभम्
प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥

हिन्दी पद्य

चन्द्र-प्रभा सम झल्लरियों से, मणि-मुक्ता मय अति कमनीय ।
दीप्तिमान शोभित होते हैं, सिर पर छत्रत्रय भवदीय ॥
ऊपर रह कर सूर्य-रश्मि का, रोक रहे हैं प्रखर-प्रताप ।
मानों वे घोषित करते हैं, त्रिभुवन के परमेश्वर आप ॥

हे त्रिजगत परमेश्वर ! मनोहारी मणि-मुक्ताओं की झिल-मिलाती झालरों से सुशोभित, और ऊपर से नीचे की ओर आने वाले दिनकर (सूर्य) की प्रखर किरणों के तेज आताप के निवारक, तथा पूर्णिमा के चमकते हुए चन्द्रमा के समान सुन्दर कांतियुक्त वलयाकार आपके मस्तक से कुछ ऊपर लट-कते हुए तीन छत्र तीनों जगत के परम-उत्कृष्ट ईश्वरपने को प्रकट करते हैं । अर्थात् हे देव ! आपके सिर पर स्थित तीन छत्र अधिक शोभा को पाते हैं । (चतुर्थ प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं नमो घोर गुण परक्कमाणं (मंत्र) ॐ उव-सग्गहरं पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं विसहर विसणिण्णासिणं मंगल कल्लाण आवासं ॐ ह्रीं नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र को जपने से राज्य मान्यता होती है और हर जगह सम्मान प्राप्त होता है ।

संग्रहणी–संहारक

गम्भीरताररवपूरितदिग्विभाग–
स्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥

हिन्दी पद्य

ऊँचे स्वर से करने वाली, सर्व दिशाओं में गुञ्जन।
करने वाली तीन लोक के, जन-जन का शुभ-सम्मेलन ॥
पीट रही है डंका–"हो सत् धर्म"–राज की ही जय-जय ।
इस प्रकार बज रही गगन में, भेरी तव यश की अक्षय ॥

हे यशोमूर्ति ! अति गम्भीर और उच्च शब्दों में कर्ण-प्रिय मधुर ध्वनि से समस्त दिशाओं को गुंजायमान करने वाला, तीनों लोकों के जीवधारी प्राणियों को शुभ सम्मेलन में सत्समागम की शुभ-सूचना देने में अति प्रवीण, श्री तीर्थङ्कर देवाधिदेव द्वारा प्रतिपादित, धर्म-शासन की विजय-घोषणा घोषित करता हुआ, दुन्दुभि नामक बाजा आकाश में बंदीजन बनकर आपके सर्वोत्तम अक्षय यशोगान को करता हुआ सुशोभित होता है (पंचम प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर बंभचारिणं (मंत्र) ॐ नमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः सर्व दोष निवारणं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मन्त्र द्वारा कुँआरी कन्या के हाथ से काते गये सूत को मंत्रित कर गले में बांधने से संग्रहणी तथा उदर की भयानक पीड़ा दूर होती है।

सर्व ज्वर संहारक

मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजात—
सन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा ।
गन्धोदबिन्दुशुभ मन्दमरुत्प्रपाता
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥

हिन्दी पद्य

कल्पवृक्ष के कुसुम मनोहर, पारिजात एवं मंदार।
गन्धोदक की मन्द वृष्टि, करते हैं प्रमुदित देव उदार॥
तथा साथ ही नभ से बहती, भीनी भीनी मंद पवन।
पंक्ति बांध कर बिखर रहे हों, मानो तेरे दिव्य-वचन॥

हे अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न देव! आकाश से अत्यन्त निर्मल सुगंधित जल-बिन्दुओं से मिश्रित मनोहारी मंद-मंद पवन से प्रेरित होकर नीचे की ओर आनेवाली देवोपनीत सुंदर-मंदार-पारिजात आदि कल्पवृक्षों की ऊर्ध्व मुखी दिव्य पुष्पवृष्टि ऐसी प्रतीत होती है मानो आपकी दिव्य-ध्वनि के (तत्कालीन अर्द्धमागध जाति के देवों द्वारा द्वादश कोष पर्यन्त प्रसारित) वचनों की पंक्ति ही मानो साक्षात् पुष्प रूप धारण करके बिखर रही हो (षष्ट प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहि पत्ताणं (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं ध्यान सिद्धि परम योगीश्वराय नमो नमः स्वाहा

(विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र द्वारा कच्चे धागे को मंत्रित कर हाथ में बांधने से एकांतरा तिजारी तापज्वरादि सब रोग दूर होते हैं।

गर्भ संरक्षक

शुम्भत्प्रभावलयभूरिविभा विभोस्ते
लोकत्रयेद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवाकरनिरन्तरभूरिसंख्या
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ॥

हिन्दी पद्य

तीन लोक की सुन्दरता यदि, मूर्तिवन्त बन कर आवे ।
तन-भा-मंडल की छवि लख कर, तव सन्मुख शरमा जावे ॥
कोटि सूर्य के ही प्रताप सम, किन्तु नहीं कुछ भी आताप ।
जिसके द्वारा चन्द्र सुशीतल, होता निष्प्रभ अपने आप ॥

हे आताप हारी देव ! तीनों लोकों की सुन्दरता साकार रूप धारण करके जब आपके सन्मुख उपस्थित होती है तब वह आपके शरीर से निकलने वाली वलयाकार कान्ति (भामंडल-कांति का गोलाकर) को देखकर स्वयं लज्जित हो जाती है। आपके शरीर को वह अनंत तेज पुंज सहस्रों सूर्य की कांति से अधिक कांति वाला होता हुआ भी प्राणियों के लिए आतापकारी प्रतीत नहीं होता अपितु चन्द्रमा के समान शीतल सुधा बरसाने वाली आतापहारी होकर भी अपनी तेज ज्योति से शीतल चांदनी रात को भी जीत लेता है। अर्थात् रात नहीं होने देता (सप्तम प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो खिल्लोसहि पत्ताणं (मंत्र) ॐ नमो ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ह्रौं पद्मावत्यै नमो नमः स्वाहा ।

(विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र द्वारा कच्चे धागे को मंत्रित कर कमर में बाँधने से असमय में गर्भ का पतन नहीं होता ।

ईति-भीति-निवारक—

स्वर्गापवर्गगममार्ग विमार्गणेष्टः
सद्धर्म तत्व कथनैक पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व
भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥

हिन्दी पद्य

मोक्ष-स्वर्ग के मार्ग प्रदर्शक, प्रभुवर तेरे दिव्य-वचन ।
करा रहे हैं 'सत्य-धर्म' के, अमर-तत्व का दिग्दर्शन ॥
सुनकर जग के जीव वस्तुतः, कर लेते अपना उद्धार ।
इस प्रकार परिवर्तित होते, निज-निज भाषा के अनुसार ॥

हे भारती-भूषण ! मोक्षाभिलाषी मानवों को स्वर्ग-मोक्ष के दिव्य-अक्षय सुखों का सत्पथ प्रदर्शन करने वाली आपके सर्वाङ्ग से स्खलित होकर निशङ्क दिव्य वाणी सर्व श्रेष्ठ समीचीन धर्म के यथार्थ अमर तत्वों का सुगमता और निपुणता से दिग्दर्शन करा देती है। जिसको सुनकर प्राणी अपना उद्धार करने में समर्थ हो जाते हैं। ऐसी वस्तु स्थिति के विवेचन करने में उदारता से काम लेती हुई दिव्यवाणी का सुखद निनाद संसार तमाम भाषाओं में परिवर्तित होकर श्रवणार्थियों के अति सरलता से समझ में आजाती है। (अष्टम प्रातिहार्य वर्णन)

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो जल्लोसहि पत्ताणं (मंत्र) ॐ नमो जय विजया पराजित महालक्ष्मी अमृतवर्षिणी अमृत-स्राविणी अमृतं भव भव वषट् सुधाय स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र की आराधना से चोरी मरी मृगी दुर्भिक्ष राजभय आदि नष्ट हो जाते हैं।

लक्ष्मी-दायक—

उन्निद्रहेमनवपङ्कज – पुञ्ज कान्ती
पर्युल्लसन्नख मयूख शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥

हिन्दी पद्य

जगमगात नख जिसमें शोभैं, जैसे नभ में चन्द्र-किरण ।
विकसित नूतन सरसीरुह सम, हे प्रभु! तेरे विमल-चरण ॥
रखते जहां वहीं रचते हैं, स्वर्ण-कमल सुर दिव्य-ललाम ।
अभिनन्दन के योग्य चरण तव, भक्ति रहे उनमें अविराम ॥

हे जिनेन्द्र देव! स्वच्छाकाश में विचरण करने वाले निर्मल चन्द्रमा की जगमगाती किरणावली के समान नख-पंक्ति से सुशोभित, प्रफुल्लित नूतन स्वर्ण सरोजों के सदृश चारों ओर दिव्य छटा छिटकाने वाले, आप के गोरे-गोरे चरणारविन्दों की डगें जहाँ पड़ती हैं, वहां २ भक्त देवों द्वारा पहिले से ही स्वर्णमयी कमलों की रचना होती जाती है, ऐसे अभिनन्दनीय आप के चरण कमलों में विना किसी बाधा के भक्तों की दृढ़ भक्ति सदा-सर्वदा बनी रहे।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हंणमो विप्पोसहि पत्ताणं (मंत्र) ॐ ह्रीं कलिकुण्डदण्डस्वामिन् आगच्छ २ आत्ममंत्रान् आकर्षय २ आत्म मन्त्रान् रक्ष २ परमंत्रान् छिन्द २ मम समीहितं कुरु २ स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित १२००० ऋद्धि मंत्र का जाप जपने से सम्पत्ति का लाभ होता है।

दुष्टता प्रतिरोधी

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशनोऽपि ॥

हिन्दी पद्य

धर्म-देशना के विधान में, था जिनवर का जो ऐश्वर्य।
वैसा क्या कुछ अन्य कुदेवों, में भी दिखता है सौन्दर्य ?
जो छवि घोर-तिमिर के नाशक, रवि में है देखो जाती।
वैसी ही क्या अतुल कान्ति, नक्षत्रों में लेखी जाती ?॥

हे धर्मोपदेशक देव ! इन्द्र की आज्ञा से देवों द्वारा रचित सुन्दर समवशरण (सभा-मंडप) में पूर्वोक्त प्रकार से वर्णित लोकातिशायि विभूति जिस प्रकार आपको धर्मोपदेश के समय तीव्रतर पुण्य कर्मोदय से उपलब्ध हुई, वैसी सुन्दर अतिशय पूर्ण विभूति दुनियां में देवताओं के नाम से पुजने वाले हरि हरादिक देवों को स्वप्न में भी प्राप्त नहीं हो सकी, सो ठीक ही है, जैसी घनान्धकार नाशक प्रभा सूर्य की होती है वैसी प्रभा नक्षत्रों में कहां हो सकती है। ?

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं (मंत्र) ॐ नमो भगवते अप्रतिचक्रे ऐं क्लीं ब्लूं ॐ ह्रीं मनोवांछित सिद्ध्यै नमो नमः अप्रतिचक्रे ह्रीं ठः ठः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र द्वारा थोड़ा सा जल मंत्रित कर मुंह पर छींटा देने से दुर्जन पुरुष वश में हो जाया करते हैं और उनकी जुबान बन्द हो जाती है।

हस्तिमद भंजक तथा वैभव वर्द्धक

श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल-
मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्ध - कोपम्।
ऐरावताभमिभमुद्धत - मापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥

हिन्दी पद्य

लोल कपोलों से झरती है, जहां निरन्तर मद की धार।
होकर अति मद मत्त कि जिस पर, करते हैं भौंरे गुंजार॥
क्रोधासक्त हुआ यों हाथी, उद्धत ऐरावत सा काल।
देख भक्त छुटकारा पाते, पाकर तव आश्रय तत्काल॥

हेभक्तदुःख भंजक देव ! झर २ झरते हुए मद-जल से मैले कुचैले चंचल कपोलों पर बार २ आकर चारों तरफ से मंड़राने वाले, काले भ्रमरों की गुंजार से खिजलाया जाकर, जो अधिक क्रोधोन्मत्त हो गया है, ऐसे ऐरावत समान मदोन्मत्त भयंकर उच्छृङ्खल काल रूप विकराल हाथी को सामने आता देखकर आपके चरणारविन्दों की भक्ति पूर्वक पूजा करने वाले भक्त जन रंच मात्र भी भयाकुलित नहीं होते अर्थात् संकट के समय आप के भक्त निर्भय रहते हैं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं (मंत्र) ॐ नमो भगवते महानागकुलोच्चाटनी कालदष्टमृतकोत्थापिनी परमंत्र प्रणाशिनी देवि-देवते ह्रीं नमो नमः स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र का आराधन करने से हस्ति का मद नाश होता है और अर्थ प्राप्ति होती है।

सिंह शक्ति संहारक

भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्त-
मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥

हिन्दी पद्य

क्षत-विक्षत कर दिये गजों के, जिसने उन्नत गण्डस्थल ।
कांतिमान गज-मुक्ताओं से, पाट दिया हो अवनी-तल ॥
जिन भक्तों को तेरे चरणों के, गिरि की हो उन्नत ओट ।
ऐसा सिंह छलांगें भरकर, क्या उस पर कर सकता चोट ? ॥

हे परम शांति दायक देव ! जिसने मदोन्मत्त हस्तियों के उन्नत गण्डस्थलों को अपने नुकीले नाखूनों से क्षत-विक्षत करके उनसे निकलने वाले रुधिर से सने गज मुक्ताओं को बिखेर कर अवनीतल को अलंकृत कर दिया और अपने शिकार पर छलांग भर कर आक्रमण करने के लिये उद्यत ऐसे दहाड़ते हुए खूंखार सिंह के पंजों के बीच पड़े हुए आप के परम भक्तों पर वह वार नहीं कर सकता अर्थात्-हिंसक सिंह आप के भक्त के समक्ष अपनी स्वाभाविक क्रूरता को भी छोड़ देता है ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं णमो वचबलीणं (मंत्र) ॐ नमो एषु वृत्तेषु वर्द्धमान तव भय हरं वृत्ति वर्णा येषु मंत्राः पुनः स्मर्तव्या अतोना परमंत्र निवेदनाय नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र का आराधन करने से जंगल का राजा सिंह भी परास्त हो जाता है । और सर्प का भय भी नहीं रहता ।

सर्वाग्नि-शामक

कल्पान्तकाल-पवनोद्धतवन्हिकल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥

हिन्दी पद्य

प्रलय काल की पवन उठाकर, जिसे बढ़ा देती सब ओर।
फिकें फुलिंगे ऊपर तिरछे, अंगारों का भी हो जोर॥
भुवनत्रय को निगला चाहे, आती हुई अग्नि भभकार।
प्रभु के नाम-मंत्र जल से वह, बुझ जाती है उस ही बार॥

हे संकट मोचन! प्रलय काल के समान अति भयंकर पवन के लगने से उत्तेजित होकर जिसने भयानक रूप धारण कर लिया है और जिससे बम-विस्फोट की तरह दूर २ तक चिनगारियां उड रही हैं तथा जो समस्त विश्व को भस्मसात् कर डालने की गरज से तड़ २ शब्द करती हुई जोरों से भभक रही है ऐसी अग्नि आप के शुभ नाम के कीर्तन रूपी शीतल जल से तत्काल शांत हो जाती है। अर्थात् आपके वचनामृत से भक्तों की क्रोधाग्नि तथा नाम स्मरण से दावाग्नि शांत हो जाती है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायवलीणं (मंत्र) ॐ ह्रीं श्रीं ह्रां ह्रीं अग्नि उपशम कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र का आराधन करने से अग्नि का भय मिट जाता है।

भुजंग (सर्प) भय भंजक

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क—
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥

हिन्दी पद्य

कंठ कोकिला सा अति काला, क्रोधित हो फण किया विशाल ।
लाल-लाल लोचन करके यदि, झपटै नाग महा विकराल ॥
नाम-रूप तव अहि-दमनी का, लिया जिन्होंने हो आश्रय ।
पग रख कर निशंक नाग पर, गमन करें वे नर निर्भय ॥

हे सातिशय नाम वाले देव ! आप के पापविमोचक, पुण्य वर्द्धक शुभ नामरूपी नागदमनी (जड़ी-बूटी) को भक्ति सहित गाढ़ श्रद्धा पूर्वक अन्तःकरण में धारण करने वाले मानव उस भयंकर उद्धत फुंकार करते हुए जहरीले नाग को भी निर्भय होकर रौंधते हुए चले जाते हैं; कि जिसके धधकते हुए अंगारे की तरह आरक्त वर्ण नेत्र हो रहे हों और काली कोयल के कंठ समान काला हो तथा क्रोधोन्मत्त होकर विशाल फण फैलाए डसने के लिए अति शीघ्रता से पवन वेग सा झपटता चला आता हो ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं (मंत्र) ॐ नमो श्रां श्रीं श्रूं श्रः जलदेवि कमले पद्म ह्रद निवासिनी पद्मोपरि संस्थिते सिद्धिं देहि मनोवांछितं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मन्त्र जपने और झाड़ने से सर्प का विष उतर जाता है ।

युद्धभय विध्वंसक

वल्गत्तुरंगगजगर्जित भीमनाद-
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं
त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥

हिन्दी पद्य

जहां अश्व की और गजों की, चीत्कार सुन पड़ती घोर ।
शूरवीर नृप की सेनाएँ, रव करती हों चारों ओर ॥
वहां अकेला शक्ति हीन नर, जप कर सुन्दर, तेरा नाम ।
सूर्य तिमिर सम शूर-सैन्य का, कर देता है काम तमाम ॥

हे महासमर भयविनाशक देव ! जैसे उदयाचल की उच्च शिखर से उदीयमान दिनकर की किरण समूह के समक्ष रात्रि का काला अन्धकार स्थिर नहीं रह सकता, वैसे ही समराङ्गण में आपके पुण्योत्पादक नाम की माला जपने वाले एक निर्बल पुरुष के सामने चौकड़ी भरते हुए तेज तुरंगों की हिनहिनाहट और चिंघाड़ते हुए हस्ति-दल समेत युद्ध में संलग्न वीर राजाओं की शस्त्र सुसज्जित पराक्रमी सेना भी अपना अस्तित्व रखने में विफल हो जाती है।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवाणं (मंत्र) ॐ नमो नमि ऊण त्रिपहर विष प्रणाशन रोग शोक दोष ग्रह कप्पदुमच्चजाई सुहनाम गहणसकल सुहदे ॐ नमः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र की आराधना से भयंकर युद्ध का भय मिट जाता है।

सर्व शांति दायक

कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाह—
वेगावतार—तरणातुर—योध—भीमे ।
युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा—
स्त्वत्पादपंकजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥

हिन्दी पद्य

रण में भालों से वेधित गज, तन से बहता रक्त अपार ।
वीर लड़ाकू जहँ आतुर हैं, रुधिर-नदी करने को पार ॥
भक्त तुम्हारा हो निराश तहँ, लख अरि सेना दुर्जय रूप ।
तव पादारविन्द पा आश्रय, जय पाता उपहार स्वरूप ॥

हे दुर्जेयशत्रुमानभंजक देव ! जिस महा समर में बरछों की नुकीली नोकों से वेधे गये हाथियों के विशालकाय शरीर से निसृत, रक्त रूपी अमर्यादित जल-प्रवाह के बहाव में बहते हुये, उसे तैर कर अविलम्ब विजय प्राप्त करने के लिये अधीर वीर योद्धाओं से जो प्रचण्ड युद्ध हो रहा है; ऐसे महायुद्ध में आपके पुनीत पाद-पद्मों की पूजा करने वाले भक्तजन अजेय शत्रु का अभिमान चूर २ कर बड़ी शान के साथ विजय-पताका फहराते हुए आनन्द विभोर हो जाते हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवाणं (मंत्र) ॐ नमो चक्रेश्वरी देवी चक्रधारिणी जिनशासनसेवाकारिणी क्षुद्रोपद्रवविनाशिनी धर्म शान्ति कारिणी नमः कुरु २ स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र जपने से भय मिटता है और सब प्रकार की शांति प्राप्त होती है ।

सर्वापत्ति विनाशक

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र—
पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्ग शिखरस्थित यान पात्रा—
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥

हिन्दी पद्य

वह समुद्र कि जिसमें होवें, मच्छ मगर एवं घडियाल ।
तूफां लेकर उठती होवें, भयकारी लहरें उत्ताल ॥
भ्रमर चक्र में फंसी हुई हों, बीचों बीच अगर जल-यान ।
छुटकारा पाजाते दुख से, करने वाले तेरा ध्यान ॥

हे भक्त वत्सल ! आपके निष्कलंक अनंत गुणोंका बारम्बार चिन्तवन करने वाले शरणागत मानवों के विकराल मुँह फैलाये हुए इधर-उधर लहराते विशाल काय मच्छ मगर आदि जल-जन्तुओं से ओत-प्रोत और भयावनी बडवाग्नि से विक्षुब्ध हो रहे समुद्र की तूफानी लहरों में डगमगाते जल-पोत बिना विपत्ति के निर्भयता पूर्वक अपारपारावार से पार हो जाते हैं अर्थात् आपके स्मरण से भक्तों पर आई हुई आकस्मिक आपत्तियां अविलम्ब विलीन हो जाती हैं।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमीयसवीणं (मंत्र) ॐ नमो रावणाय विभीषणाय कुंभकरणाय लंकाधिपतये महाबल पराक्रमाय मनश्चिंतितं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि-मंत्र की आराधना से सब प्रकार की आपत्तियां हट जाती हैं।

जलोदरादिरोग एवं सर्वोपसर्ग संहारक

उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पादपंकजरजोमृतदिग्ध देहा
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज तुल्य रूपाः ॥

हिन्दी पद्य

असहनीय उत्पन्न हुआ हो, विकट जलोदर पीड़ा भार ।
जीने की आशा छोड़ी हो, देख दशा दयनीय अपार ॥
ऐसे व्याकुल मानव पाकर, तेरी पद-रज संजीवन ।
स्वास्थ्य लाभ कर बनता उसका, कामदेव-सा सुन्दर तन ॥

हे कृपालु सन्त ! कुष्ट, ज्वर, विषम ज्वर, सन्निपात, जलोदरादि भयंकर असाध्य रोगों से ग्रसित होकर जिनके शरीर अत्यन्त जर्जरित हो चुकने से अधिक दयनीय दशा को पहुँच गये हैं और जिन्होंने अपने जीवन की आशा तक छोड़ दी है ऐसे निरुपाय मानव आपके पवित्र पाद-पद्मों की रज रूपी अमृत का लेप करके कामदेव सदृश स्वस्थ-सुन्दर रूप वाले बन जाते हैं। अर्थात् श्रद्धा पूर्वक शरीर पर आपके अभिषेक का जल लगाने से शारीरिक तमाम बीमारियां दूर होकर शरीर कुन्दन सा चमकने लगता है।

(ऋद्धि) ॐ अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं (मंत्र) ॐ नमो भगवती क्षुद्रोपद्रवशान्तिकारिणी रोगकष्टज्वरोपशमं शान्तिं कुरु २ स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र की आराधना से सब रोग नाश होते हैं तथा उपसर्ग आदि का भय नहीं रहता।

बन्धन—विमोचक

आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा —
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघा ।
त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥

हिन्दी पद्य

लोह शृङ्खला से जकड़ी है, नख से शिख तक देह समस्त ।
घुटने-जंघे छिले बेड़ियों, से अधीर जो हैं अति त्रस्त ॥
भगवन ऐसे बंदीजन भी, तेरे नाम-मंत्र की जाप ।
जप कर गत बन्धन हो जाते, क्षण भर में अपने ही आप ॥

हे महामहिम ! लोहे की बड़ी २ वजनदार सांकलों से जिनके शरीर के समस्त अवयव शिर से लेकर पांव तक बहुत ही मजबूती से जकड़े हुये हैं और हाथों पैरों में कड़ी दो लोहशलाकों की बेड़ियों के पड़े रहने से निरन्तर उनकी बार २ रगड़ से घुटने और जंघायें छिल गई हैं, ऐसे लोह शृङ्खलाबद्ध मानव भी आपके शुभ नाम रूपी पाप विनाशक पवित्र मंत्र का सत्य हृदय से स्मरण कर क्षणभर में अपने आप ही बंधन की कठोर यातना से छुटकारा पाकर निर्द्वन्द और निर्भय हो जाते हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं (मंत्र) ॐ णमो ह्रां ह्रीं श्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ठः ठः जः जः क्षां क्षीं क्षूं क्षः क्षयः स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित ऋद्धि मंत्र की आराधना से आराधक बंधनों से निर्मुक्त होकर निर्भय हो जाता है ।

अस्त्रशस्त्रादिशक्ति निरोधक

मत्तद्विपेन्द्र मृगराजदवानलाहि—
संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥

हिन्दी पद्य

वृषभेश्वर के गुण स्तवन का, करते अहि-निशि जो चिन्तन ।
भय भी भयाकुलित हो उनसे, भग जाता है हे स्वामिन ॥
कुंजर-समर-सिंह-शोक-रुज, अहि दावानल कारागार ।
इनके अति भीषण दुखों का, हो जाता क्षण में संहार ॥

हे वृषभेश्वर ! इस प्रकार जो विवेकशील बुद्धिमान पुरुष आपके इस परम पवित्र स्तोत्र का रात-दिन श्रद्धा सहित चिन्तवन अध्ययन आराधन और मनन करते हैं उनके मदोन्मत्त हाथी, विकराल सिंह-भभकता दावानल, भयंकर सर्प, बीभत्स संग्राम विक्षुब्ध समुद्र, असाध्य जलोदरादि रोग और बन्धन जनित भय भी भयाकुलित होकर अतिशीघ्र नाश हो जाते हैं और फिर आपके भक्तजनों की ओर लौट कर वार नहीं करते ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं (मंत्र) ॐ नमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः क्ष्य श्रीं ह्रीं फट् स्वाहा (विधि) श्रद्धा सहित प्रतिदिन ऋद्धि-मंत्र को १०८ बार जपने से शत्रु वश में होता है, विजय लक्ष्मी प्राप्त होती है और शस्त्रादि के घाव शरीर में नहीं हो पाते ।

सर्व सिद्धि दायक

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां
भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं
तं मानतुङ्ग मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥

हिन्दी पद्य

हे प्रभु तेरे गुणोद्यान की, क्यारी से चुन दिव्य-ललाम ।
गूंथी विविध वर्ण सुमनों की, गुण-माला सुन्दर अभिराम ॥
श्रद्धा सहित भविकजन जो भी, कण्ठाभरण बनाते हैं ।
मानतुङ्ग सम निश्चित सुन्दर, मोक्ष-लक्ष्मी पाते हैं ॥

हे करुणानिधे ! मेरे द्वारा प्रगाढ़ श्रद्धा और अनन्य भक्ति पूर्वक आपके परम-पावन ज्ञानादि अनंतानंत अलौकिक दिव्य गुणों से अथवा प्रसाद माधुर्यादि गुणों से परिपूर्ण इस सुन्दर मनोज्ञ मनोरम अकारादि वर्णों के श्लेष यमक अनुप्रसादादि रूप चित्र-विचित्र पुष्पों से गूंथी गई आपकी इस पवित्र स्तुति रूप माला को इस संसार में जो मानव अपने गले में धारण करता है अर्थात् बार २ स्तुति पढ़ता है उस उन्नत-मना आदरणीय श्रद्धास्पद पुरुष को या मुझ मानतुंग मुनि को विवश होकर धन राज्य, तथा सम्पदा स्वर्गादि लौकिक विभूतियां तथा अनुक्रम से मोक्ष रूपी लक्ष्मी स्वयमेव वरण करती हैं अर्थात् प्राप्त होती हैं ।

(ऋद्धि) ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसाहूणं (मंत्र) महति महावीर वड्ढमाण बुद्धि रिसीणं ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा झ्रौं झ्रौं स्वाहा। (विधि) श्रद्धा सहित ४६ दिन तक १०८ वार ऋद्धि मंत्र जपने से मनोवांछित समस्त कार्यों की सिद्धि होती है ।

भाषाकार की प्रार्थना

मानतुङ्ग की बेड़ियां, टूट गईं थीं सर्व ।
भक्तामर के रचे से, हो करके निःगर्व ॥१॥
इन समान स्तोत्र को, पढ़े-गुने तिरकाल ।
ऋद्धि-सिद्धि वसु नव सुनिधि, पावत वह तत्काल ॥२॥
यदि सच्चा श्रद्धान हो, नहीं अभावे योग ।
कार्य सफल होंगे सभी, निर्विकार उपयोग ॥३॥
हिन्दी भाषा में कियो, देख मूल का अर्थ ।
पढ़ना सोच-विचार कर, नहीं समझना व्यर्थ ॥४॥
स्वर व्यञ्जन मात्रादि की, मुझ से जो हो भूल ।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, तो पावो भव-कूल ॥५॥
बिरले समझें संस्कृत, भाषा समझें सर्व ।
इसी हेतु मैंने लिखा, भाषा में निःगर्व ॥६॥
मुझ को चाह न और कछु, प्रभु की चाहूँ भक्ति ।
जब तक यह संसार है, बनी रहे अनुरक्ति ॥७॥
यदि प्रभु इसके विषय-में, देना चाहें आप ।
तो मेरे जन्मान्तरों, के कट जावें पाप ॥८॥
वह दिन कब आवे प्रभो, छूट जाय संसार ।
देना उसे मिला विभो, नमता सौ सौ बार ॥९॥
चल न सके अब लेखनी, आगे को पद एक ।
प्रभु के गुण के लेख को, चाहे अधिक विवेक ॥१०॥
मत घबड़ा-री लेखनी, अब ले ले विश्राम ।
होंगे सिद्ध मनोर्थ सब, प्रभु का जप के नाम ॥११॥

भक्तामर-महाकाव्य-मंडल पूजा

माडने का आकार
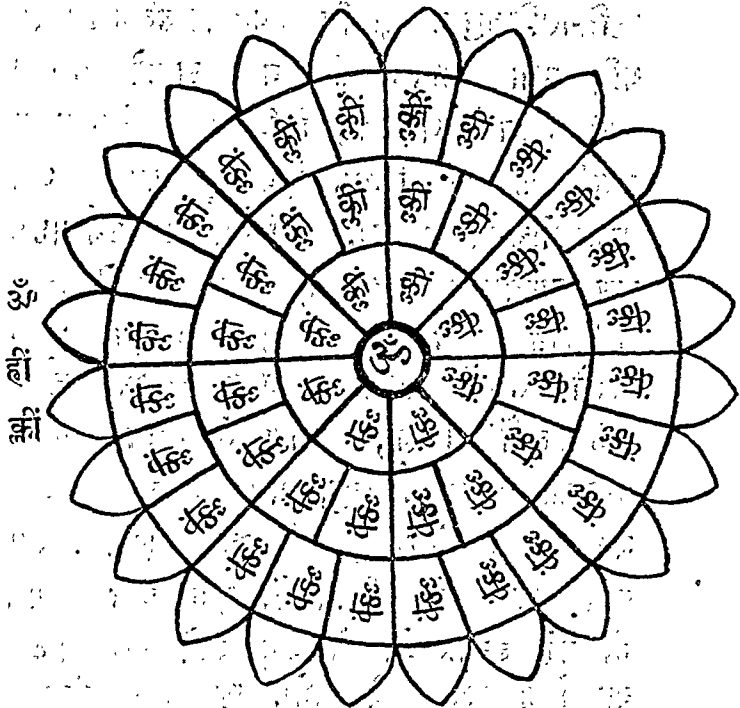
सर्व सिद्धिदायक मंत्र

ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्री वृषभनाथ तीर्थङ्कराय नमः

समस्त कार्यों की सिद्धि के लिये प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक उक्त मंत्र १०८ वार जपना चाहिये।

श्रीमन्महामुनिसोमसेनप्रणीता

श्री भक्तामर–महाकाव्य–मंडल-पूजा

ॐ जय जय जय। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।

आर्या–छन्द

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥
ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

चत्तारि मंगलं

(१) अरिहंता मंगलं (२) सिद्धा मंगलं (३) साहू मंगलं (४) केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा

(१) अरिहंता लोगुत्तमा (२) सिद्धा लोगुत्तमा (३) साहू-लोगुत्तमा (४) केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि

(१) अरिहंते सरणं पव्वज्जामि (२) सिद्धे सरणं पव्वज्जामि (३) साहू सरणं पव्वज्जामि (४) केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

नोट—इत्यादि 'अपवित्रः पवित्रो वा' से लेकर प्रारम्भिक नित्य पूजा पाठ के पश्चात् श्रीभक्तामर महाकाव्य मण्डल-पूजा प्रारम्भ करना चाहिये।

पूर्व-पीठिका

श्रीमन्तमानस्य जिनेन्द्रदेवं, परं पवित्रं वृषभं गणेशं।
स्याद्वादवारां निधिमिन्दुविम्बं, भक्तामरस्यार्चनमात्मसिद्ध्यै
वक्ष्ये सुवीरं करुणार्णवं च, श्रीभूषणं केवलज्ञानरूपं।
अलक्ष्यलक्ष्यं प्रणपाम्यलं वै, भक्तामरं सिद्धवधू प्रियं वै॥

आदौ भव्यजनेनैव, गत्वा चैत्यालयं प्रति।
नन्तव्यः परया भक्त्या, सर्वज्ञः शुद्धलक्षणः॥
ततः सद्गुरुमानस्य, विनयानतचेतसा।
प्रार्थना परिकर्त्तव्या, पूजया भावशुद्धितः॥
दीयतां सुगरो ! आज्ञा, पूजां कर्तुं शुभांवरं।
इत्युक्ते गुरुणाभाणि, विधिर्भक्तामरस्य वै॥
श्रीखण्डागुरुकर्पूर-नारिकेल फलानि च।
प्रचुराक्षतपुष्पौघा — नक्षताञ्चरुसंचयान्॥
मेलयित्वा प्रमोदेन, चन्द्रोपमध्वजादिकान्।
दीपधूप महावाद्य, गीतारावविराजितान्॥
तोरणै र्मणिसन्नद्धै-रुज्वलैश्चामरैस्तथा।
मंडपैः पंचवर्णैश्च, द्रव्यै र्मङ्गलसूचकैः॥
वसुदेवमिते कोष्ठे, वर्तुलाकारमण्डिते।
रचयेद्वेदिकां तत्र, श्रीजिनार्चनहेतवे॥
नातिवृद्धो न हीनाङ्गो, न कोपी न च बालकः।
मलिनो न न मूर्खश्च, सर्वव्यसनवर्जितः॥

कलाविज्ञानसम्पूर्णो, वाचालःशास्त्रवाक्पटुः ।
पण्डितो मृज्यते तत्र, करुणारसपूरितः ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो वाग्मी, सकलीकरणे क्षमः ।
स्पष्टाक्षरश्च मन्त्रज्ञो, गुरुभक्तो विशेषतः ॥
श्रावकान् श्राविकाश्चैव, योगिनश्चार्यिकास्तथा ।
चतुर्विधं परं संघं, समाह्वयेत्सुभक्तितः ॥
पूजा करणशुद्धेन, कार्या सर्वज्ञसद्मनि ।
ततोऽर्चनं श्रुतस्यापि, गुरोः पादार्चनं ततः ॥
कार्यं सर्वज्ञपूजायाः, प्रारम्भे सर्व सिद्धिदं ।
अनेन विधिना भव्यैः, पूजा कार्या निरन्तरम् ॥
रचयन्नर्हतां पूजा—पीठिकां पुण्यमाप्नुयात् ।
सिद्ध्यन्ति सर्वकार्याणि, विघ्नराशिः क्षयं व्रजेत् ॥

॥ इति पीठिका समाप्ता ॥

❀ श्रीवृषभदेवस्तुति ❀

(स्रग्धरावृत्तम्)

श्रीमद्देवेन्द्रवंद्यौ, जिनवरचरणौ, ज्ञानदीपप्रकाशौ ।
लोकालोकावकाशौ, भवजलधिहरौ, संततं भव्यपूज्यौ ॥१॥
नत्वा वक्ष्ये सुपूजां, वृषभजिनपतेः, प्राणिनां मुक्तहेतुं ।
यस्मात्संसारपारं, श्रयति स मनुजो, भक्तियुक्तः सदासः ॥२॥

(वसंततिलिकावृतम्)

श्रीनाभिराजतनुजं शुभमिष्टिनाथं,
पापापहं मनुजनागसुरेशसेव्यम् ।
संसार सागर सुपोतसमं पवित्रं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥३॥

यस्यात्र नाम जपतः पुरुषस्य लोके,
पापं प्रयाति विलयं क्षणमात्रतो हि ।
सूर्योदये सति यथा तिमिरस्तथातं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥४॥

सर्वार्थसिद्धिनिलयाद्भुवि यस्य पुण्यात्,
गर्भावतारकरणेऽमरकोटिवर्गैः ।
वृष्टिः कृता मणिमयी पुरुदेशतस्तं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥५॥

जन्मावतारसमये सुरवृन्दवन्द्यैः,
भक्त्यागतैः परमहृष्टितया नतस्तैः ।
नीत्वा सुमेरुमभिवन्द्य सुपूजितस्तं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥६॥

षट् कर्मयुक्तिमवदर्श्य दयां विधाय,
सर्वः प्रजा जिनधरेण वरेण येन ।
संजीविताः सविधिना विधिनायकं तं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥७॥

दृष्ट्वा सकारणमरं शुभदीक्षिताङ्गं,
कृत्वा तपः परममोक्षपदाप्तहेतुं ॥
कर्मक्षयः परिकृताः भुवि येन तं हि,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥८॥

ज्ञानेन येन कथितं सकलं सुतत्वं,
दृष्ट्वा स्वरूपमखिलं परमार्थ सत्यं।
तद्दर्शितं तदपि येन समं जनेभ्यो,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥९॥

इन्द्रादिभिः रचितमिष्टिविधिं यथोक्तं,
सत्प्रातिहार्यममलं सुखिनं मनोज्ञं।
यस्योपदेशवशतः सुखिता नरस्य,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥१०॥

पंचास्तिकायषड्द्रव्यसुसप्ततत्व—
त्रैकाल्यकादिविविधानि विकाशतानि।
स्याद्वादरूपसरितानि हि येन तं च,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥११॥

कृत्वोपदेशमखिलं जिनवीतरागो,
मोक्षं गतो गत विकार परम्य रूपं।
सम्यक्त्वमुख्यगुणाष्टकसिद्धकस्त्वं,
वंदामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम् ॥१२॥

विविधविभवकर्ता, पापसंतापहर्ता,
शिवपदसुखभोक्ता, स्वर्गलक्ष्म्यादिदाता ।
गणधरमुनिसेव्यः, "सोमसेनेन" पूज्यः,
वृषभजिनपतिः श्रीं, वाञ्छितां तां प्रदद्यात् ॥
इदं स्तोत्रं पठित्वा हृदयास्थित सिंहासनस्योपरि
परिपुष्पाञ्जलिंक्षिपेत् ।

卐

❀ अथ स्थापना ❀

मोक्षसौख्यस्य कर्तॄणां, भोक्तॄणां शिवसम्पदाम् ।
आह्वाननं प्रकुर्वेऽहं, जगच्छान्तिविधायिनाम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्नश्रीवृषभजिनेन्द्रदेव ! मम हृदये अवतर अवतर संवौषट् । इत्याह्वाननम् ॥

देवाधिदेवं वृषभं जिनेन्द्रं, इक्ष्वाकुवंशस्य परं पवित्रं ।
संस्थापयामीह पुरं प्रसिद्धं, जगत्सुपूज्यं जगतांपतिंच ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव ! मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । इति स्थापनम् ॥

कल्याणकर्ता, शिवसौख्यभोक्ता, मुक्तेः सुदाता, परमार्थयुक्तः ।
यो वीतरागो, गत रोष दोष, तमादिनाथं, निकटं करोमि ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव ! मम हृदयसमीपे सन्निहितो भव भव वषट् । इतिसन्निधिकरणम् ॥

❀ अथाष्टकम् ❀

मन्दाक्रान्तावृत्तम्

गाङ्गेया यमुनाहरित्सुसरितां, सीतानदीया तथा ।
क्षीराब्धिप्रमुखाब्धितीर्थमहिता, नीरस्य हैमस्य च ॥
अम्भोजीयपरागवासितमहद्गन्धस्य धारा सती ।
देया श्रीजिनपादपीठकमलस्याग्रे सदा पुण्यदा ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्री वृषभजिनचरणाय जलम् ।

श्रीखण्डाद्रिगिरौ भवेन गहने, कृत्तैः सुवृत्तै र्घनैः ।
श्रीखण्डेन सुगन्धिना भवभृतां, सन्ताप विच्छेदिना ॥
काश्मीरप्रभवैश्च कुङ्कुमरसैः, घृष्टेन नीरेण वै ।
श्रीमाहेन्द्रनरेन्द्रसेवितपदं, सर्वज्ञदेवं यजे ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्री वृषभजिनचरणाय चन्दनम् ।

श्रीशाल्युद्भवतन्दुलैः सुविलसद्गन्धै र्जगल्लोभकैः ।
श्रीदेवाब्धिसरूपहारधवलैः नेत्रैर्मनोहारिभिः ॥
सौधौतैरतिशुक्तिजातिमणिभिः, पुण्यस्य भागैरिव ।
चन्द्रादित्यसमप्रभुं प्रभुमहो, संचर्चयामो वयम् ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिन चरणाय अक्षतम् ।

मंदाराब्जसुवर्णजातिकुसुमैः, सेन्द्रीयवृन्दोद्भवैः,
येषां गंधविलुब्धमत्तमधुपैः, प्राप्त प्रमोदास्पदम् ।

मालाभिः प्रविराजिभिः जिन ! विभो देवाधिदेवस्य ते,
संचर्चे चरणारविन्दयुगलं, मोक्षार्थिनां मुक्तिदं ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभ जिनचरणाय पुष्पम् ।

शाल्यन्नं घृतपूर्णसर्पिसहितं, चक्षुर्मनोरंजकम् ।
सुस्वादुं त्वरितोद्भवं मृदुतरं, क्षीराज्यपक्वं वरम् ॥
क्षुद्रोगादिहरं सुबुद्धिजनकं, स्वर्गापवर्गप्रदम् ।
नैवेद्यं जिनपाद पद्म पुरतः—, संस्थापयेऽहं मुदा ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्री वृषभ-जिन चरणाय नैवेद्यम् ।

अज्ञानादितमोविनाशनकरैः, कर्पूरदीप्तै वरैः ।
कार्पासस्य विवर्तिकाग्रविहितैः, दीपैः प्रभाभासुरैः ॥
विद्युत्कान्तिविशेपसंशय करैः, कल्याणसंपादकैः ।
कुर्यादार्तिहरार्तिकां जिन ! विभो ! पादाग्रतो युक्तितः ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिन-चरणाय दीपम् ।

श्रीकृष्णागरुदेवदारुजनितैः, धूमध्वजोद्वर्तिभिः ।
आकाशं प्रतिव्याप्तधूम्रपटलैः, आह्वानितैः षट्पदः ॥
यः शुद्धात्मविबुद्धकर्मपटलोच्छेदेन जातो जिनः ।
तस्यैव क्रमपद्मयुग्मपुरतः, संधूपयामो वयम् ॥

ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिन-चरणाय धूपम् ।

नारिंग्रामकपित्थपूगकदली—, द्राक्षादि जातैं फलैः ।
चक्षुश्चित्तहरैः प्रमोदजनकैः, पापापहै देहिनाम् ॥
वर्णाद्यैः मधुरैः सुरेशतरुजैः, खर्जूरपिंडैस्तथा ।
देवाधीशजिनेशपादं युगलं, संपूजयामि क्रमात् ॥

ॐ ह्रीं परमशांति विधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिन-चरणाय फलम् ।

नीरैश्चन्दनतंदुलैःसुसघनैः, पुष्पैः प्रमोदास्पदैः ।
नैवेद्यैः नवरत्नदीपनिकरै, धूमैरतथा धूपजैः ॥
अर्घ्यं चारुफलैश्च मुक्तिफलदं, कृत्वा जिनांघ्रि द्वये ।
भक्त्या श्रीमुनिसोमसेनगणिना, मोक्षो मया प्रार्थितः ॥

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिन-चरणाय अर्घ्यम् ।

जिनेन्द्रपादाब्जयुगस्यभक्त्या, जिनेन्द्रमार्गस्य सुरक्षपालं ।
सम्यक्त्वयुक्तं गुणरश्मि पूर्णं, गोवक्त्रयक्ष्यं परिपूजयामि ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवपादारविंदसेवकगोवक्त्रयक्षस्य आगत-विघ्न निवारकाय अर्घ्यम् ॥

चक्रेश्वरी जैनपदारविन्द—सहानुरक्ता जिनशासनस्था ।
विघ्नौघहंत्री सुखधामकर्त्री-भक्त्या यजे तां सुखकार्य कर्त्रीम् ॥

ॐ ह्रीं जिनमार्गरक्षाकरायै दारिद्र्यनिवारकायै चक्रेश्वर्यै अर्घ्यम् ।

❀ अथाष्टदलकमलपूजा ❀

(वसंततिलकावृत्तम्)

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा —
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा—
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥
नम्रासुरासुरनृनाथशिरांसि यस्य,
संविम्बितानि नखविंशति दर्पणेऽस्मिन् ।
तं विश्वनाथमभिवंद्य सुपूजयामि,
पक्वान्न पुष्प जलचन्दनतंदुलाद्यैः ॥

ॐ ह्रीं विश्वविघ्नहराय क्लीं महावीजाक्षर सहिताय हृदया स्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम् ।

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्वबोधा—
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्त —हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥
रम्यैः सुसंस्तवनकोटिभिरादरेण,
देवैस्तुतो त्रिविधशस्त्रयुतै जिनो यः ।
संसारसागरसुतारणनौसमानं—
पूजामि चारुचरुचंदनपुष्पतोयैः ॥

ॐ ह्रीं नानामरसंस्तुताय सकलरोगहराय क्लीं महावीजाक्षर सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम् ।

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ !

स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् ।

बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब—

मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥

युक्त्या क्रियास्तवनमादिजिनस्य मूढ़ो,

मत्या विनापि बुधसेवितपादकस्य ।

संपादयामि मनसीह कृतो विचारः,

पूजारतः शुचिरतः सुखदायकस्य ॥

ॐ ह्रीं मत्यादिसुज्ञानप्रकाशनाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम् ।

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान्,

कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।

कल्पान्त—कालपवनोद्धत—नक्र—चक्रं,

को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥

चन्द्रस्य कांतिसदृशान् परमान् गुणौघान्,

कोऽसौ पुमान् तव विभो ! कथितुं समर्थः ।

तस्मात्विधाय जिनपूजनमेव कार्यम्,

मुक्तिं व्रजामि वरभक्ति जवात् देव ॥

ॐ ह्रीं नानादुःखसमुद्रतारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम् ।

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश !

कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।

प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम्॥
मूढोऽप्यहं जिनगुणेषु सदानुरक्तः,
भक्तिं करोमि मतिहीन उदार बुद्ध्या।
कार्यस्य सिद्धिमुपयाति सदैव पुण्यात्
तस्माद्व्रजामि जिनराजपदारविन्दं।

ॐ ह्रीं सकलकार्यसिद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अर्घ्यम्।

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किलमधौ मधुरं विरौति
तच्चाम्रचारु—कलिकानिकरैक—हेतुः॥
ये सन्ति शास्त्रसबला प्रहसन्ति ते मां
भक्त्या तथापि जिनभक्तिवशात्करोमि।
पूजाविधिं जिनपतेः सुरचित्तचौरं,
स्वर्गापवर्गसुखदं परमं गुणौघम्॥

ॐ ह्रीं याचितार्थप्रतिपादनशक्तिसहिताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अर्घ्यम्।

त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम्॥

स्तोत्रेण नाथ ! विलयं क्षणमात्रतो यत्,

पापं प्रयाति पठतां भवतां नरस्य।

मुक्तेः सुखं सहि भुनक्ति निवार्य कुष्ठं,

पूजां करोमि सततं च ततो जिनस्य ॥

ॐ ह्रीं सकलपापफलकुष्ठादिनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम्।

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद—

मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात्।

चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु

मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः ॥

ज्ञात्वा मया सुरचितां जिननाथ पूजां,

पूजां विधाय पुरुषः शिवधाम याति।

सम्यक्त्वमुख्यगुणकाष्टकधारिसिद्धः ,

सिद्धभवेत्स भविनां भवतापहारी ॥

ॐ ह्रीं अनेकसंकटसंसारदुःखनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम्।

जलकुसुमसुगंधै — रक्षतैः दीपधूपैः।

विविध फलनिवेद्यै—रर्चयामीह देवं ॥

सुरनरवरसेव्यं दोहदानां वरेशं।

शिवसुखपदधामं प्राणिनां प्राणनाथम् ॥

ॐ ह्रीं अष्टदलकमलाधिपतये श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

॥ अथषोडसदलकमल पूजा ॥

(वसंततिलकावृत्तम्)

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभव
पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि ॥

तव गुणावलिगानविधायिनो, भवति दूरितरं दुरितास्पदं ।
तव कथापि शिवाढ्य विधायिका, कुरु जिनार्चनकं शुभदायकम्

ॐ ह्रीं सकलमनवांछितफलदात्रे क्लीं महावीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूतनाथ !
भूतैगु गौभु वि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किंवा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥

न हि विभोऽद्भुतमंत्रसमप्रभो, भवति यो भविनां भुवि भक्तिदः ।
जिनवरार्चनतोऽर्चनतार्चितं, फलमिदं भविता कथितं जिनैः ॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जिनस्मरणजिनसम्भूताय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः
क्षारं जलं जलनिधेरसितु क इच्छेत् ॥

भवति दर्शनमेवमिते सति, भवति यादृश एव सुतोषकः ।
न हि तथा परतःक्वचिदेव तत्, सततमेव करोमि तवार्चनम् ॥

ॐ ह्रीं सकलतुष्टिपुष्टिकराय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ! ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं नहि रूपमस्ति ॥

जिनविभो ! तव रूपमिव क्वचित्, न भवतीह जने विभवान्विते ।
भवति पापलयं जिनदर्शनात्, जिन ! सदार्चनतां प्रकरोमि ते ॥

ॐ ह्रीं वांछितरूपफलशक्तये क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि
निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥

सुरनरोरगमानसहारकम्, सुवदनं शशितुल्य मतं त्वकं ।
जगतिनाथ ! जिनस्य तवात्र भो, पग्यिजे अतएव जिनं मुदा ॥

ॐ ह्रीं लक्ष्मीसुखविधायकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप—
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति ।

ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर—नाथमेकं
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥
तव गुणान् हृदि धारक मानवो, भ्रमति निर्भयतो भुवि देववत्
शशिसमैर्जलचन्दनमुख्यकैः परियजामि नतो जिनपादुका ॥

ॐ ह्रीं भूतप्रेतादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्री वृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि—
र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ?
अमरनारिकटाक्षशरासनै—र्न चलितो वृषभः स्थिरमेरुवत् ।
शिवपुरे उपितं च जिनं नु तं, परियजे स्तवनैश्च जलादिभिः ॥

ॐ ह्रीं मेरुवन्मनोबलकरणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

निर्धूम— वर्तिरपवर्जिततैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥
जगति दीपक इव जिन देवराट्, प्रकटितं सकलं भुवनत्रयं ।
पद—सरोज युगं तु समर्चये, विमलनीरमुखाष्ट विधैस्तव ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यलोकवशंकराय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः
स्पष्टीकरोपि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदरनिरुद्ध — महाप्रभावः
सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र ! लोके ॥

शुभरवीव जिनः जिननायकः, दुरितरात्रिघनान्ध–तमोपहः ।
स्वजनपद्मविकाश—विधायकः स्तवनपूजनकैश्च यजामि तं ॥

ॐ ह्रीं पापान्धकारनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

नित्योदयं दलित –– मोहमहान्धकारं
गम्यं न राहु वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्व–शशाङ्क–बिम्बम् ॥

जिनशशी प्रकरोति विनाशकं, सकलभव्य सुपद्मवनं घनं ।
निशदिनं तिमरप्रतिघातको, वरमहं सुयजामि जलादिकैः ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रवत्सर्वलोकोद्योतनकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दु दलितेषु तमः सु नाथ !
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥

जिनमुखोद्भवकान्ति विकाशितः, निखिललोक इतीह दिवाकरः ।
किमथवा सुखदः प्रति मानवः, भवतु सः वृषभः शुभसेवया ॥

ॐ ह्रीं सकलकालुष्यदोपनिवारणाय क्लीं महावीजाक्षर-सहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम् ।

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरिहरादिपु नायकेपु ।
तेजः स्फुरन्मणिपु याति यथा महत्वं,
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥

त्वयि प्रभो! प्रतिभाति यथा शुचि, न हि तथा हरिमुख्यसुरादिपु
वसतु सः प्रभुरादिजिनेश्वरो, मम मनःसरसीव सु-हंसवत् ॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानप्रकाशितलोकालोकस्वरूपाय क्लीं महा-वीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा
दृष्टेपु येपु हृदयं त्वयि तोपमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ॥

तव शुभं वर दर्शनमंजसा, हरति पापसमूहकमेव तत् ।
भवंतु ते चरणाब्जयुगं प्रभो, स्थिरकरं मम चित्तशुचेःकरम् ॥

ॐ ह्रीं सर्वदोपहरशुभदर्शनाय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वादिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥

सुवनिता जनयन्ति सुतान् बहून्, तव समो न हि नाथ ! महीतले
तनुवरं सुखदं सुरभासुरं, मनसि तिष्ठतु मे स्मरणं तु ते ॥

ॐ ह्रीं अद्भुतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस—
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥

त्वमिह देवहरि जिननायकः, प्रभुवरः यतिराज मुनीश्वरः ।
त्वदभिधानमहो जगतां प्रभो ! प्रतिक्षणं भवतु प्रतिमानसम् ॥

ॐ ह्रीं सहस्रनामाधीश्वराय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्ग — केतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥

पदयुगस्य सुसंस्मरणान्नरः, शिवपदं लभतेऽति सुखप्रदं ।
परियजे वर पादयुगं मुदा, जिन ! ददातु सुवांछितमत्र मे ॥

ॐ ह्रीं मनोवांछित फलदायकाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय हृदयास्थिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

हत्वा कर्मरिपून बहून् कटुतरान्, प्राप्तं परं केवलम् ।
ज्ञानं येन जिनेन मोक्षफलदं, प्राप्तं द्रुतं धर्मजम् ॥

अर्घेणात्र सुपूजयामि जिनपं, श्री सोमसेनस्त्वहं ।
मुक्तिश्रीष्वभिलाषया जिन ! विभो ! देहि प्रभो ! वांछितम् ॥

ॐ ह्रीं हृदस्थित षोडसदलकमलाधिपतये श्री वृषभदेवाय अर्घ्यम् ।

❀ अथचतुर्विंशतिदलकमलपूजा ❀

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात् ।
धातासि धीर ! शिव मार्ग विधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ॥

बुद्धः प्रबुद्धो वर बुद्धिराजो, मुक्ते विंधानाद्धविनां विधाता ।
सौख्यप्रयोगात् जिन ! शंकरोसि, सर्वेषु मर्त्येषु सदोत्तमस्त्वम्

ॐ ह्रीं षट्दर्शनपारंगताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥

लोकार्तिनाशाय नमोस्तु तुभ्यं, नमोस्तु तुभ्यं जिनभूषणाय ।
त्रैलोक्यनाथाय नमोस्तु तुभ्यं, नमोस्तु तुभ्यं भवतारणाय ॥

ॐ ह्रीं नानादुःखविलीनाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै—

स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश !

दोषैरुपात्तविविधाश्रय —— जातगर्वैः

स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥

किमद्भुतं दोषसमुच्चयेन, कृत्वाऽत्र गर्वं जिनसंश्रितोऽसि ।
स्वप्नेऽपि न त्वं गुणराशिधामा, दोषाश्रितो मर्त्यसमाश्रयेण ॥

ॐ ह्रीं सकलदोषनिर्मुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

उच्चैरशोक—तरुसंश्रितमुन्मयूख—

माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।

स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं

बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्त्ति ॥

अशोकवृक्षाः सुकृता विचित्रा, छायाघना नाथ ! सुपुण्ययोगात्
तवोपरि प्रीतजनेषु नित्यं, सुखप्रदाः स्युः परमार्थशोभाः ॥

ॐ ह्रीं अशोकतरुविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे

विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।

बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानम्

तुङ्गोदयाद्रि—शिरसीव—सहस्ररश्मेः ॥

सिंहासनं प्राणिहितंकरं यत्, सुशोभते हेममयं विचित्रं ।
सहस्रपत्रोपरिकर्णिकायाम् , विराजते जैनतनुः सुशोभा ॥

ॐ ह्रीं मणिमुक्ताखचितसिंहासनप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महावीजाक्षर सहिताय श्री वृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार—
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ।

गंगातरंगाभविराजकानं, विभ्राजते चामरचारुयुग्मं ।
सुदर्शनाद्रौ गतिनिर्झरं वा, तनोति देशेऽत्रमहाविकाशं ।

ॐ ह्रीं चतुषष्टिचामरप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महावीजाक्षर-सहिताय श्री वृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त—
मुच्चैःस्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् ।
मुक्ताफलप्रकरजालविवृद्धशोभं,
प्रख्यापयस्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥

त्रैलोक्यराज्यं कथितं प्रमाणं, छत्रत्रयं चन्द्रसमानकांति ।
मुक्ताफलैः संयुतकं सुशोभं, विराजते नाथ ! तवोपरिष्टात् ।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

गम्भीर तारवपूरितदिग्विभाग—
स्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन्,
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥

वादित्रनादो ध्वनतीह लोके, घनाघनध्वानसमप्रसिद्धः ।
आज्ञां त्रिलोके तव विस्तरासां, पूज्यां करोम्यत्र जिनेश्वरस्य ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्याज्ञाविधायिने क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

मन्दार—सुन्दरनमेरु— सुपारिजात—
सन्तानकादि कुसुमोत्कर वृष्टिरुद्धा ।
गन्धोदबिन्दु—शुभमंद—मरुत्प्रयाता ,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥

मन्दारकल्पद्रुमपारिजात, चम्पाब्ज—संतानकपुष्पवृष्टिः ।
मरुत्प्रयाता जलबिन्दुयुक्ता, यस्यप्रभावाच्च तमर्चयामि ॥

ॐ ह्रीं समस्तपुष्पजातिवृष्टिप्रातिहार्याय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

शुम्भत्प्रभावलयभूरिविभा विभोस्ते,
लोकत्रयेद्यु तिमतां द्यु तिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवा कर—निरन्तर—भूरिसंख्या,
दीप्त्याजयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ॥

भामण्डलं सूर्यसहस्रतुल्यं, चक्षुर्मनोऽल्हादकरं नराणाम् ।
सम्बाधिताज्ञान तमोवितानं, तत्संयुतं देव ! सुपूजयामि ॥

ॐ ह्रीं कोटिभास्करप्रभामंडितभा-मंडलप्रातिहार्याय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभ जिनेन्द्राय अर्घ्यम ।

स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः
सद्धर्मतत्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः ।

दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व—
भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥

दिव्यध्वनिर्योजनमात्रशब्दः, गम्भीरमेघोद्भवगर्जनाकः ।
सर्वप्रभाषात्मकधीरनादः, यः संस्तुतः देव शिवास्य भूतः ॥

ॐ ह्रीं जलधरपटलगर्जितसर्वभाषात्मकदिव्यध्वनियोजनप्रमाण प्रातिहार्याय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती,
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥

विहारकाले रचयन्ति देवाः, पद्मानि पादं प्रति सप्त सप्त ।
सम्प्राप्य पुण्यं शिवशं व्रजन्ति, तव प्रभावेन करोमि पूजां ॥

ॐ ह्रीं पादन्यासेपद्मश्रीयुक्ताय क्लीं महावीजाक्षरसंहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा
तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशनोपि ॥

लक्ष्मी विभो देव ! यथा तवास्ति, तथा न हर्यादिषु नायकेषु ।
तेजो यथा सूर्यविमानकस्य, तारागणस्य प्रभवतीह नो वा ॥

ॐ ह्रीं धर्म्मोपदेशसमयेसमवसरणादिलक्ष्मीविभूति-विराजमानाय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल

मत्तभ्रमद्भ्रमरनाद — विवृद्धकोपम् ।

ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं ,

दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥

मत्तोऽपि हस्ती मदलीलया च, नायाति नाम्ना निवसन्मुखे हि
संसारपाथोनिधितारकस्य, देवाधिदेवस्य जिनस्य कर्त्तुः ॥

ॐ ह्रीं हस्त्यादिगर्वदुद्धरभयनिवारणाय क्लीं महावीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

भिन्नेभकुंभगलदुज्ज्वलशोणिताक्त —

मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः ।

बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि

नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥

उत्तुंग पुच्छेन विराजमानः, आरक्तनेत्रैरदनैर्विशिष्टः ।
तव केशरी देव ! सुनाममात्रात्, करोति क्रीड़ां विडालवत् सः

ॐ ह्रीं युगादिदेवनामप्रसादात्केशरिभयविनाशकाय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

कल्पान्तकालपवनोद्धतवन्हिकल्पं ,

दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगम् ।

विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,

त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥

त्वन्नामतोयेन कृतासुधारा, वन्हिप्रतापं हरति क्षणात्सा।
भवाग्नितापप्रलयंकरस्त्वं, अतस्तवेष्टिं विदधे वराध्यैः ॥

ॐ ह्रीं संसाराग्नितापनिवारणाय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम्।

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तं।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क—
स्त्वन्नामनागदमनी हृदियस्य पुंसः॥

क्रोधेनयुक्तःफणिराजसर्पः, क्रोधं परित्यज्य प्रलापवान्सः।
करोति दूरं वरदेवनाम्ना, नानाविधप्राणनिधानदानात्।

ॐ ह्रीं त्वन्नामनागदमनीशक्तिसम्पन्नाय क्लीं महावीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम्।

वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनाद,
माजौ वलं वलवतामपि भूपतीनाम्।
उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं,
त्वत्कीर्तनात्तमइवाशुभिदामुपैति॥

संग्रामभूमौमृतभूरिजीवे, मातङ्ग चक्राश्वपदातिमध्ये।
सुखेन चायान्ति विजित्य शत्रून्, सदा मनोज्ञे मुदितो यजे तम्

ॐ ह्रीं संग्राममध्येक्षेमंकराय क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम्।

कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाह—
वेगावतारतरणातुर — योधभीमे।

युद्धे जयं विजितदुर्ज्जयजेयपक्षा—
स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥

दन्ताग्रभिन्नेभसुमस्तकेषु, परस्परं यत्र गजाश्वरुद्धे।
मनुष्य आयाति सुकौशलेन, त्वन्नाममंत्रस्मरणाज्जिनेश ॥

ॐ ह्रीं वनगजादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यम्।

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र—
पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ ।
रंगत्तरंगशिखरस्थित—यानपात्रा —
स्त्रासं विहायभवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥

कल्पान्तवातेन गतं विकारं, सचक्रमक्रादिकजीवपूर्णं।
अब्धिं समुत्तीर्य नरो भुजाभ्यां, प्रयाति शीघ्रं तव पादचित्तः ॥

ॐ ह्रीं संसाराब्धितारणाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः।
त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा—
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥

जलोदरैः कुष्टकुशूलरोगैः, शिरोव्यथाव्याधिबहुप्रकारैः।
सुपीड़ितानां भवति क्षणो हि, विरोगिता त्वत्स्मरणात्प्रभोऽत्र ॥

ॐ ह्रीं दाहतापजलंधराष्टादशकुष्टसन्निपातादिरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

आपादकण्ठमुरुश्रृङ्खलवेष्टिताङ्गा—
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघा ।
त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः
सद्यः स्वयं विगतबंधभया भवन्ति ॥

केनापिदुष्टेननृपेणधर्मी, संबंधितः श्रृङ्खलयानरश्च ।
स त्वां जवं मुंचति बंधतोऽद्य, संसारपाशप्रलयं नमामि ॥

ॐ ह्रीं नानाविधकठिनवन्धनदूरकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

मत्तद्विपेन्द्रमृगराज — दवानलाहि,
संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥

रोगज्वराः कुष्टभगंदराद्याः, जलाग्निघोरा विविधाश्च विघ्नाः ।
शीघ्रं क्षयं यान्ति जिनेशनाम, संजप्यमानस्य नरस्य पुण्यात् ॥

ॐ ह्रीं बहुविधविघ्नविनाशाय क्लीं महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां
भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं
तं मानतुंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥

भक्तामराख्यं स्तवनं यजामि, श्रीमानतुंगेन कृतं विचित्रं ।
कवित्वहीनो मतिशास्त्रहीनो, भक्त्यैकया प्रेरित सोमसेनः ॥

ॐ ह्रीं सकलकार्यसाधनसमर्थाय क्ली महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय अर्घ्यम् ।

नानाविघ्नहरं प्रतापजनकं, संसारपारप्रदं ।
संस्तुत्य श्रीदं यजामि सततं श्री सोमसेनोऽप्यहम् ॥
पूर्णार्घेण मुदा सुभव्यसुखदं, आदीश्वराख्यापरं ।
हीरापंडितसूपरोधवशतः स्तोत्रस्य पूजाविधि ॥

ॐ ह्रीं हृदयास्थिताय चतुर्विंशति दल कमलाधिपतये क्लीं महावीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यम् ।

वरसुगन्धसुतन्दुलपुष्पकैः, प्रवरमोदकदीपकधूपकैः ।
फलभरैः परमात्म प्रदत्तकं, प्रवियजे जयदं धनदं जिनम् ॥

ॐ ह्रीं हृदयास्थिताय अष्टचत्वारिंशत् दलकमलाधिपतये क्लीं महावीजाक्षर सहिताय श्रीवृषभजिनेन्द्राय महापूर्णार्घ्यम् ।

जलगंधाद्यष्टभिर्द्रव्यैयुगादिपुरुषं यजे ।
सोमसेनेन संसेव्यं, तीर्थ-सागर चर्चितं ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहि जिणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहि जिणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहि जिणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कुट्ठ बुद्धीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादानुसारीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिन्नसोदराणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धीणं अर्घ्यं ।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहिय बुद्धाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो ऋजुमदीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विपुलमदीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दस पुव्वाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदश पुव्वीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठांगमहाकुशलाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउयणयद्धिपत्ताणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामिणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमोघोरगुणाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुण परक्कमाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरबंभचारिणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खिल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्य ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहि पत्ताणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अर्घ्य ।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचबलीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमीयसवाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीण महाहसाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं अर्घ्यं ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं अर्घ्यं ।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसाहूणं अर्घ्यं ॥

अथ भक्तामर महाकाव्य मंडल-पूजा

जयमाला

(त्रोटक वृत्तम्)

शुभदेश शुभंकर कौशलकं, पुरुपट्टन मध्य सरोज समं ।
नृप नाभि नरेन्द्र सुतं सुधियं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनं ॥
कृत कारित मोदन मोदधरं, मनसा वचसा शुभकार्य परं ।
दुरितापहरं चामोदकरं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनं ॥
तव देव सुजन्म दिने परमं, वरनिर्मितमंगलद्रव्यशुभं ।
कनकाद्रि सु-पांडुक पीठगतिं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनं ॥
व्रतभूषण भूरि विशेष तनुं, करकंकण कज्जल नेत्र चरणं ।
मुकुटाब्ज विराजित चारुमुखं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनं ॥
ललितास्य सुराजित चारुमुखं, मरुदेवि सपुत्र जातसुखं ।

दोहा—

कर प्रमाण के माप तें, गगन नपै किह भंत।
त्यों तुम गुण वर्णन करत, कवि पावै नहिं अंत॥
टुक अवलोकन आप को, भयो धर्म अनुराग।
इकटक देखूं नित्य तो, बढ़े ज्ञान-वैराग॥
पन्थी प्रभु मन्था मथन, कथन तुम्हार अपार।
करो दया सब पै प्रभो, जामें पावैं पार॥

विसर्जन पाठ

ॐ ह्रीं अस्मिन् भक्तामर महाकाव्य मंडल-पूजा विधान कर्मणि आहूयमान देवगणाः स्वस्थानं गच्छन्तु। अपराध क्षमापणं भवतु।

आरती

ओम् जय आदिनाथ देवा
ओम् जय आदिनाथ देवा॥
सुर नर मुनि गुण गाते,
तुम कैलाशपति कहलाते
हम दर्शन कर पाप मिटाते
अन्तर बाहर दीप जलाते
करते चरणों की सेवा
ओम् जय आदिनाथ देवा॥

(जय वीर)